गामीण रोजगार

कुरुक्षेत्र

Publications Division
LIBRARY

अप्रैल 1989

मूल्य : 2 रुपये

निर्धनता उन्मूलन के लिए, ग्रामीण निर्धनों की क्रय शक्ति में गुणात्मक वृद्धि करना आवश्यक है । रोजगार के अतिरिक्त साधन उपलब्ध कराए बिना यह संभव नहीं है ।

वर्ष-34 अंक 6, चैत्र-वैशाख, शक 1911

कार्यवाहक सम्पादक : गुरचरण लाल लूथरा
उप सम्पादक : राकेश शर्मा

उत्पादन अधिकारी : राम स्वरूप मुंजाल

आवरण पृष्ठों की साज सज्जा : एम० एम०मलिक
फोटो प्रभाग एवं चित्र : रमेश कुमार, फोटोग्राफर, ग्रामीण विकास विभाग से साभार

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास विभाग का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए । अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है ।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए ।

एक प्रति : 2.00 रु.
वार्षिक चंदा : 20 रु.

विषय-सूची

भारत में ग्रामीण विकास : नीतियां, कार्यक्रम एवं मूल्यांकन 2
डा. मुन्नी लाल विश्वकर्मा

ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण—एक अध्ययन 6
डा. वी. मीरा रैड्डी

गांवों में रोजगार के प्रयास 9
डा. एस. के. सिंह

खेती के अलावा रोजगार के अन्य अवसर जरूरी हैं 12
नवीन जोशी

ट्राइसेम तथा ग्रामीण विकास 15
ओम प्रकाश दत्त

बजट और ग्रामीण विकास 19
परमेश कश्यप

आर्थिक समीक्षा-1988-89 : अर्थव्यवस्था सुखद स्थिति में 22
विनोद बाली

बैसाखी 24
यदुनन्दन प्रसाद शर्मा 'यदुवर'

रेलवे बजट और ग्रामीण विकास 25
डा. राम शरण गौड़

जन-जन के श्रीराम 26
सच्चिदानन्द

ग्रामीण बेरोजगारी—निदान आवश्यक 27
डा. अजय जोशी

समन्वित ग्रामीण विकास योजना के ट्राइसेम और आई.एस.बी. घटकों के लिये सहायता प्रारूप—कुछ मुद्दे 29
डा. बी. सुधाकर राव

दायरे 32
रीना तिवारी

शिक्षित बेरोजगारों के लिए स्वरोजगार योजना का योगदान 35
संजय कुमार शर्मा

गरीबी निवारक रोजगार योजनाएं 37
सुबह सिंह यादव

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार: सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।
दूरभाष: 384888

भारत में ग्रामीण विकास : नीतियां, कार्यक्रम एवं मूल्यांकन

डा. मुन्नी लाल विश्वकर्मा

महात्मा गांधी के शब्दों में–"भारत गांवों में बसता है, यदि गांवों की कायापलट हो जाती है तो समूचे राष्ट्र का विकास सम्भव हो सकेगा।" इस दृष्टिकोण से वर्तमान समय में भारत के लिए सर्वाधिक प्रासंगिक मुद्दा ग्रामीण विकास का है। नियोजन के विगत वर्षों में देश में तीव्र औद्योगीकरण एवं शहरीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण यह मुद्दा और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। गांव की खुशहाली में ही राष्ट्र की खुशहाली निहित है। गांवों को उपेक्षित छोड़कर की गयी उन्नति एवं समृद्धि एक पक्षीय होगी और एक पक्षीय विकास कभी भी हमारा लक्ष्य नहीं रहा है। हमारा लक्ष्य तो देश का समग्र विकास है, सर्वांगीण विकास, जो गांवों के विकास के बिना अधूरा है, इसलिए हमें गांवों को समृद्धि का सूचक बनाना है और तभी देश उन्नतशील राष्ट्रों की श्रेणी में आ सकेगा।

भारत की कुल जनसंख्या का 76 प्रतिशत साढ़े पांच लाख गांवों में बसता है और 69 प्रतिशत प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर रहता है। राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान 40 प्रतिशत है। देश को निर्यात मूल्य का 35 प्रतिशत खेती की उपज से ही प्राप्त होता है अर्थात ग्रामीण विकास भारत के आर्थिक विकास का मुख्य आधार है।

ग्रामीण विकास से तात्पर्य ऐसी नियोजन नीति से है, जिसके द्वारा ग्रामीण समाज के कमजोर वर्गों के सामाजिक-आर्थिक स्तर को स्थानीय संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग द्वारा ऊपर उठाया जा सके एवं गांव को खुशहाल बनाया जा सके। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत आर्थिक और सामाजिक दोनों पहलुओं का समावेश होता है। आर्थिक पहलू से तात्पर्य-रोजगार, उत्पादन, आय एवं व्यवसायिक जागृति से है। अतः ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय विकास का पर्याय माना जा सकता है।

स्वतन्त्रता से पूर्व के शासकों ने ग्रामीण विकास की तरफ कभी ध्यान नहीं दिया। उन्होंने अपने माल की बिक्री हेतु हमारे कुटीर उद्योगों को तहस-नहस कर दिया। अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु जोतों की परम्परा को छिन्न भिन्न कर दिया। ग्रामीण गरीबों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती चली गयी। उन्हें रोटी, कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत आवश्यकताओं का मोहताज बना दिया गया।

स्वाधीनता संग्राम के दौरान ही महात्मा गांधी एवं पं. जवाहरलाल नेहरू तथा अन्य शीर्षस्थ नेताओं ने देशवासियों को बार-बार याद दिलाया था कि भारत गांवों में बसता है और बिना इनकी स्थिति में सुधार किये हमारा स्वराज अधूरा रहेगा।

ग्रामीण विकास कार्यक्रम

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् 1 अप्रैल 1951 से नियोजित आर्थिक विकास के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया गया है।

ग्रामीण विकास हेतु अपनाये गये विभिन्न कार्यक्रमों में:

सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952), राष्ट्रीय विस्तार सेवा (1953), खादी एवं ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम (1957), ग्रामीण आवासीय परियोजना (1957), बहुउद्देश्यीय अनुसूचित जनजाति विकास खण्ड कार्यक्रम (1957), पैकेज कार्यक्रम (1960), गहन जिला कृषि कार्यक्रम (1960),

व्यावहारिक आहार कार्यक्रम (1962), ग्रामीण उद्योग परियोजना (1962), गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (1964), उच्च उत्पादकता वाली किस्मों का कार्यक्रम (1966), किसानों का प्रशिक्षण एवं शिक्षा कार्यक्रम (1966), कुआं निर्माण कार्यक्रम (1966), ग्रामीण कार्य कार्यक्रम (1967), जनजाति विकास खण्ड (1966), ग्रामीण जनशक्ति कार्यक्रम (1969), सूखा पीड़ित क्षेत्र कार्यक्रम (1970), ग्रामीण रोजगार हेतु नकद योजना (1971), लघु कृषक विकास एजेन्सी (1971), जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम (1972), जनजाति विकास हेतु पाइलट योजना (1972), पाइलट गहन ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (1972), न्यूनतम आवश्यक कार्यक्रम (1972), कमाण्ड एरिया विकास कार्यक्रम (1975), विशेष दुग्ध उत्पादन कार्यक्रम (1972), काम के बदले अनाज कार्यक्रम (1977), रेगिस्तान क्षेत्र विकास कार्यक्रम (1977), सम्पूर्ण ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979), स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवा प्रशिक्षण कार्यक्रम (1979), समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979), राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम (1980), नया बीस सूत्री कार्यक्रम (1980), ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (1983) तथा सातवीं योजना (1985-90) में समन्वित ग्रामीण विकास योजना, इन्दिरा आवास योजना, अग्नि बीमा योजना, सामाजिक सुरक्षा कोष, सामूहिक बीमा योजना, आबादी पर्यावरण सुधार परियोजनाओं का कार्यक्रम, जल धारा एवं कुटीर ज्योति कार्यक्रम शुरू किये गये हैं जिनका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास रहा है। अब ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों में तेजी लाने हेतु इन्हें पंचायती राज से जोड़ने का कार्यक्रम है।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम सर्वाधिक लाभप्रद योजना है जिसके अन्तर्गत आय तथा रोजगार में बढ़ोतरी के द्वारा गरीबों में से सबसे गरीब समुदाय की सहायता करना है जिसमें छोटे व सीमान्त किसान, कृषि एवं गैर कृषि श्रमिक, ग्रामीण कारीगर, आर्टिस्ट, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लोग शामिल हैं। ग्रामीणों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाना इस कार्यक्रम का उद्देश्य है।

ग्रामीण विकास का समन्वित कार्यक्रम सर्वप्रथम मार्च 1976 में देश के कुल 20 ब्लाकों में प्रारम्भ हुआ था। इसके पूर्व के कार्यक्रमों में कुछ दोहरापन था, जिससे योजनाओं के लाभों की गणना करने में कठिनाई होती रही। अतः पूर्व की सभी योजनाओं को मिलाकर समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की शुरुआत की गयी। सन् 1978-79 में इसका विस्तार देश के 2,300 ब्लाकों में कर दिया गया। इस कार्यक्रम से प्राप्त अनुभव के आधार पर सन् 1980 में महात्मा गांधीजी की जयन्ती(2 अक्तूबर)के दिन से यह कार्यक्रम देश के कोने-कोने में, हर अंचल में चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य समाज के गरीब तबके को ऐसे व्यवसायों की ओर प्रेरित करना है जिससे कम से कम पूंजी से अधिकाधिक लाभ अर्जित किया जा सकता हो अथवा आय में वृद्धि की जा सकती हो। इसके अन्तर्गत सिंचाई योजनाएं, दूध देने वाले पशुओं को उपलब्ध कराना, मुर्गी पालन, भेड़ पालन आदि कार्यक्रम शामिल हैं। साथ ही कुछ और परम्परागत कार्यों—मिट्टी के बर्तन बनाने, बढ़ईगीरी, मोचीगीरी, दर्जी का काम, उपकरणों की मरम्मत, रिक्शा चालन आदि के लिए भी मदद की गयी तथा इन धन्धों के लिए उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की गई।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

1 अप्रैल 1977 से शुरू होने वाले काम के बदले अनाज कार्यक्रम का नाम बदल कर 1980 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम रख दिया गया जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार, अल्परोजगार लोगों को रोजगार मुहैया कराना, ग्रामीण आर्थिक एवं सामाजिक आधार के लिए सामुदायिक सम्पत्ति को उत्पन्न करना एवं ग्रामीण क्षेत्रों के जीवन स्तर में सुधार करना है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में 1834 करोड़ रुपये व्यय किये गये जिससे 1980-81 में 41.35 करोड़ दिन, 1982-83 में 35.1 करोड़ दिन, 1984-85 में 35.31 करोड़ दिन रोजगार उपलब्ध कराये गये। सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) के प्रथम वर्ष 1985-86 में 532 करोड़ रुपये, वर्ष 1986-87 में 685-94 करोड़ रुपये व्यय किये गये जिससे क्रमशः 31.1 करोड़ दिन व 37 करोड़ दिन के लिए रोजगार उपलब्ध कराया गया।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम

यह योजना 15 अगस्त, 1983 से लागू की गयी है। जिसका उद्देश्य भूमिहीन ग्रामीणों को रोजगार उपलब्ध

कराना है। छठी योजना (1980-85) में इस कार्यक्रम के लिए 600 करोड़ रुपये का आबंटन किया गया। 1.09 मी. टन खाद्यान्न तथा 384.74 करोड़ रुपये का उपयोग हुआ। फलस्वरूप 26.3 करोड़ श्रम दिवसों के रोजगार का सृजन किया गया। 1985-86 एवं 1986-87 में क्रमशः 20.6 व 28.0 करोड़ दिनों का रोजगार सृजित किया गया।

न्यूनतम आवश्यक कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में कुल 5807 करोड़ रुपये व्यय किये गये जिसमें से बेसिक शिक्षा पर 890.07 करोड़ रुपये, प्रौढ़ शिक्षा पर 166.42 करोड़ रुपये, ग्रामीण स्वास्थ्य पर 566.46 करोड़ रुपये, ग्रामीण जल आपूर्ति पर 2406-56 करोड़ रुपये, ग्रामीण विद्युतीकरण पर 249.25 करोड़ रुपये, ग्रामीण सड़कों पर 1261.96 करोड़ रुपये, ग्रामीण आवास पर 426.54 करोड़ रुपये, शहरी गन्दी बस्तियों के सुधार पर 182.93 करोड़ रुपये एवं आहार पर 397.13 करोड़ रुपये व्यय किये गये। सातवीं योजना (1985-90) में इस कार्यक्रम पर कुल 7035.42 करोड़ रुपये व्यय होने का लक्ष्य रखा गया है। इस योजना के प्रथम (1985-86) एवं द्वितीय (1986-87) वर्ष में उपर्युक्त मदों पर क्रमशः 268.57 व 466.04 करोड़ रुपये, 62.15 व 100.73 करोड़ रुपये, 129.06 व 174.23 करोड़ रुपये, 700.93 व 762.25 करोड़ रुपये, 58.42 व 95.92 करोड़ रुपये, 252.79 व 290.17 करोड़ रुपये, 102.85 व 142.24 करोड़ रुपये, 44.87 व 44.73 करोड़ रुपये तथा 175.28 व 284.84 करोड़ रुपयें व्यय किये गये हैं।

20 सूत्री कार्यक्रम

इस कार्यक्रम की शुरुआत जुलाई 1975 में हुई थी। 1 अप्रैल, 1986 को पुनः संशोधित 20 सूत्री कार्यक्रम घोषित किया गया जिसका प्रमुख उद्देश्य गरीबी दूर करना एवं लोगों को अधिकतम् रोजगार मुहैया कराना है।

ग्रामीण विकास कार्यक्रम का मूल्यांकन

सरकार की ग्रामीण एवं गरीबी उन्मूलन नीतियों एवं कार्यक्रमों का मूल्यांकन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सरकार द्वारा इस दिशा में निरन्तर प्रयास जारी हैं। लेकिन क्या इन विकास कार्यक्रमों की उपलब्धियां सन्तोषजनक हैं? पिछले 41 वर्षों से चली आ रही आर्थिक नीति, विकास योजना एवं विभिन्न कार्यक्रम देश से गरीबी-उन्मूलन करने में कई तरह से विफल रहे हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के बावजूद जिस प्रकार सरकार विकास का दावा करती है, उसके अनुरूप उपलब्धियां सीमित हैं। वैज्ञानिक, तकनीकी एवं औद्योगिक समृद्धि का समुचित लाभ अभी तक समस्त ग्रामवासियों को नहीं मिल पाया है।

ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के निम्नलिखित दोष रहे हैं :

(1) ग्रामीण विकास की सबसे बड़ी असफलता का कारण स्थानीय गुणक का सृजित न होना है, फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में बाधा उत्पन्न हुई है।

(2) ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों, स्थानीय संसाधनों, आवश्यकताओं तथा दक्षता पर आधारित स्वयं स्फूर्त सम्पत्तियां सृजित नहीं हो सकी हैं।

(3) विभिन्न विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत चुने हुए व्यक्तियों की आय में वृद्धि हेतु वित्तीय एवं अन्य सुविधाएं उपलब्ध करायी गयी हैं। इसके बावजूद भी परिसंपत्तियाँ सृजित नहीं हो सकीं।

(4) विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के लाभ ग्रामीण जनता तक नहीं पहुंच सके हैं, इसका कारण जिन लोगों के ऊपर विकास की जिम्मेदारी सौंपी गयी है, उसका निर्वाह न करना है।

ग्रामीण विकास की बाधाएं

ग्रामीण विकास कार्यक्रम विभिन्न बाधाओं से घिरे हैं जो निम्नलिखित हैं :

(1) जहां तक समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का सम्बन्ध है उसमें चयनित लाभान्वित इकाइयों में गरीबों का प्रतिशत बहुत कम है।

(2) विकास के विभिन्न कार्यक्रमों को लागू करने वाला प्रशासनिक तंत्र अनेकों कमियों से ग्रस्त है।

(3) विकास खण्ड एवं ग्रामीण स्तर पर विकास कार्यक्रमों के लिए जनप्रतिनिधियों का पर्याप्त सहयोग नहीं मिलता है।

(4) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को सामान्य विकास कार्यक्रमों के साथ न जोड़ा जाना ।

ग्रामीण विकास हेतु सुझाव

ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों एवं नीतियों में कोई दोष नहीं है, बल्कि दोष उन नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन प्रणाली, व्यवस्था, संस्थान तथा उन यंत्रों का है जिस पर इन कार्यक्रमों को सफल बनाने की जिम्मेदारी है । ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में तेजी लाने हेतु यह लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं :

(1) ग्रामीण विकास हेतु कृषि पर विशेष बल के साथ इससे सम्बन्धित कुछ मूलभूत आवश्यकताओं जैसे परिवहन, विपणन, वित्त एवं संचार आदि का विकास किया जाना चाहिए ।

(2) ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का लाभ गांव की गरीब जनता तक पहुंचाने की जिम्मेदारी ग्रामीण विकास अधिकारियों एवं कर्मचारियों की होती है । अतः इस स्तर पर सबसे अधिक निगरानी एवं सर्वेक्षण की आवश्यकता है ताकि ये लोग अपनी जिम्मेदारी का पूर्णतया निर्वाह कर सकें ।

(3) ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी, गांव की गरीब जनता को समय-समय पर देने की आवश्यकता है ।

(4) गांव की गरीब एवं अशिक्षित जनता को शिक्षित करने की आवश्यकता है ताकि ग्रामीण जनता ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के लाभ को समझ सके एवं उसका भरपूर लाभ उठा सके ।

(5) ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों में और अधिक चुस्ती लाने हेतु सरकार को और कारगर उपाय अपनाने होंगे तथा कार्यशील मशीनरी के साथ शक्ति से पेश आना होगा । साथ ही दोषी एवं भ्रष्ट लोगों को कड़े से कड़ा दण्ड देना होगा ।

(6) ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लाभार्थियों एवं केन्द्र सरकार के बीच सीधा सम्पर्क होना चाहिए ताकि विकास कार्यक्रमों की खामियों की जानकारी लाभार्थियों द्वारा सरकार को सीधी दी जा सके ।

(7) ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को जनता तक पहुंचाने वाले अधिकारी एवं कर्मचारी ईमानदार, सच्चरित्र एवं नैतिकतावादी हों ताकि ग्रामीणवासियों को विकास कार्यक्रमों के यथोचित लाभ मिल सकें ।

(8) ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की सफलता के लिए जनता का पूर्ण सहयोग आवश्यक है साथ ही स्वैच्छिक संगठनो भी उसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं ।

(9) पंचायतों को चाहिए कि वे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लगन, उत्साह और निष्ठा के साथ लागू करें और करायें, इससे न केवल गांवों का स्वरूप बदलेगा, अपितु लोगों का जीवन-स्तर भी सुधरेगा ।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में विकास कार्यक्रमों को जिला विकास खण्ड एवं गांव स्तर तक ले जाने की बात कही जा रही है ताकि ग्रामीण विकास में तीव्र गति से प्रगति हो सके । ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को मद्दे नजर रखते हुए इस योजना में संसाधनों का आबंटन इस प्रकार होना चाहिए कि ग्रामीण विकास से आठवीं योजना के उद्देश्यों की प्राप्ति में बड़ी सीमा तक सफलता हासिल हो सके । इसके लिए दृढ़ विश्वास, लगन, प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन एवं जनता के सहयोग की नितान्त आवश्यकता होगी, जिनकी एक बड़ी सीमा तक हमारे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में कमी महसूस होती रही है ।

सी.18/54
माताकुण्ड,
वाराणसी ।

ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण – एक अध्ययन

डा. वी मीरा रैड्डी

पिछले चार दशकों में कई पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों को इस्तेमाल करके लोगों को सामाजिक न्याय दिलाने और देश की अर्थव्यवस्था का विकास करने के लिए केन्द्र और राज्य दोनों स्तरों पर अनेक प्रयास किए गए हैं। लेकिन ये सभी प्रयास आम गरीब लोगों और विशेष रूप से गांवों में रह रहे निर्धन वर्ग का जनजीवन सुधारने के लिए नए अवसर प्रदान करने में असफल रहे हैं। देश में हुए विकास के लाभ, शहरों और गांवों में, खास तौर पर उन गरीब लोगों को नहीं मिले हैं जो गरीबी रेखा से नीचे बसर कर रहे हैं। बड़े स्तर पर योजना बनाने के बजाय योजना बनाने के कांम को जिला तथा खण्ड स्तर पर करने से भी बेरोजगारी और गांवों की गरीबी पर कोई विशेष असर नहीं हुआ।

गत चार दशकों के दौरान, कृषि उद्योगों में उल्लेखनीय वृद्धि होने के बावजूद भी खेतों में काम करने वाले श्रमिकों का अनुपात कम हुआ है। कुछ अनुमानों से यह पता चलता है कि औद्योगिक क्षेत्र में 8-9 प्रतिशत की वृद्धि होने के बाद भी, बेरोजगार लोगों की बढ़ती हुई संख्या में से कुछ लोगों को ही संगठित क्षेत्र में काम मिल सकेगा। इसलिए इन बेरोजगारों को कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों में ही रोजगार दिलाये जाने की आवश्यकता है। अतः यह बात स्पष्ट है कि हमें बेरोजगारी और अल्प-रोजगार की समस्या का समाधान किसी नई नीति की खोज करके, ग्रामीण क्षेत्रों में ही निकालना है।

हाल के वर्षों में ग्रामीण गरीबों को रोजगार प्रदान करने और उनके लिए जीविका-उपार्जन के साधन जुटाने के लिए सामुदायिक विकास; गहन कृषि क्षेत्र आयोजना, गहन कृषि विकास कार्यक्रम, लघु किसान विकास एजेन्सी, सीमान्त किसान तथा कृषि श्रमिक, पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, सूखा ग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम, कमान्ड ऐरिया विकास एजेन्सी, आदिवासी क्षेत्र आयोजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण योजना (ट्राइसेम), 20 सूत्री कार्यक्रम आदि जैसे अनेक विकास कार्यक्रम शुरू किए गए हैं।

इस लेख में ग्रामीण रोजगार और गांवों के विकास में ट्राइसेम के प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है।

संक्षिप्त चित्रण

ट्राइसेम योजना 1979 में शुरू की गई है। योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण युवाओं को आवश्यक प्रशिक्षण और दक्षता प्रदान करके उन्हें अपना रोजगार शुरू करने के लिए तैयार करना है। इस कार्यक्रम में उन लोगों को शामिल किया जा रहा है जो 18 से 35 वर्ष की आयु वर्ग के हैं, और अतिनिर्धन परिवारों से हैं। कार्यक्रम के अन्तर्गत ऐसी आशा है कि एक वर्ष में एक-एक ब्लाक में 40 ग्रामीण युवाओं के हिसाब से कम से कम दो लाख युवकों को तैयार किया जाएगा। यह योजना समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का अंग होगी और इसे जिला औद्योगिक केन्द्र तथा वाणिज्यिक बैंकों की सहायता से चलाई जाएगी। इस योजना के लिए लाभार्थियों का चयन करने में खण्ड विकास अधिकारी इन एजेन्सियों की मदद करेंगे। कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को 100 रुपये महीना वजीफे के अलावा, औजारों की खरीद के लिए 500 रुपये और यूनिट की स्थापना लागत के एक तिहायी के बराबर वित्तीय सहायता दी जाती है। सहायता की राशि 3000 रुपये से अधिक नहीं होगी।

अध्ययन का क्षेत्र

ट्राइसेम कार्यक्रम के प्रभाव का एक विस्तृत अध्ययन करने के लिए कुर्नूल जिले में कुर्नूल समिति क्षेत्र को चुना गया है। समिति को वर्तमान जिला राजस्व प्रशासन के पुनर्गठन के अन्तर्गत तीन मण्डलों में विभाजित किया गया है। 936 वर्ग किलोमीटर से अधिक क्षेत्र में फैले 59 राजस्व गांवों में लगभग 50 प्रतिशत गांवों को वर्तमान अध्ययन के लिए चुना गया है। अध्ययन के लिए आर्थिक रूप से पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति और जनजाति के समूहों को, उनकी आय को ध्यान में रखते हुए चुना गया है जो गांव के विभिन्न सामाजिक-आर्थिक स्तरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें से अधिकांश बेरोजगार अथवा अल्प रोजगार वाले हैं और अपने जीवन यापन के लिए कृषि पर निर्भर हैं क्योंकि इनके पास रोजगार का और दूसरा कोई विकल्प नहीं है।

अध्ययन के लिए अध्ययन क्षेत्र में से गांवों का चयन किया जाता है। उसके बाद चुने हुए गांवों में से लाभार्थियों का चयन किया जाता है। चूंकि जनसंख्या के आकार और अन्य सुविधाओं के सम्बन्ध में गांवों में भिन्नता होती है, इसलिए ऐसा सम्भव हो सकता है कि किसी न किसी वर्ग के एक से अधिक गांवों का चयन हो जाए। इसलिए इस कठिनाई को दूर करने के लिए गांवों का अध्ययन हेतु अंतिम चुनाव करने से पूर्व उन्हें जनसंख्या और क्षेत्र के आकार, शहरी केन्द्र से दूरी, संचार और आधुनिकीकरण की सुविधाओं के आधार पर चार वर्गों में विभाजित किया जाता है। उसके पश्चात अलग-अलग गांवों में ट्राइसेम कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षित लाभार्थियों की सूची बनाई जाती है। लाभार्थियों की कुल 410 की संख्या में से जिसमें 44 आर्थिक रूप से पिछड़ी जातियां, 111 पिछड़ी जातियां, 210 अनुसूचित जातियां और 45 अनुसूचित जनजातियों के हैं में से 50 प्रतिशत अर्थात चारों वर्गों में से क्रमशः 21,54,105 और 20 को अध्ययन के लिए चुना जाता है। सर्वेक्षण में नमूना इकाइयों में महिला तथा पुरुष दोनों को लिया जाता है क्योंकि सर्वेक्षण का उद्देश्य लिंग का भेद किये बिना युवा वर्ग का उत्थान करना है।

अध्ययन के परिणाम

यहां कुर्नूल समिति में ट्राइसेम कार्यक्रम के कार्यों और प्रभावों को प्रस्तुत किया गया है जिसमें समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के एक भाग के रूप में ग्रामीण गरीबों को एक लाभकारी गैर-कृषि रोजगार प्रदान करने में इसके प्रभाव पर विशेष ध्यान दिया गया है।

ट्राइसेम कार्यक्रम के अन्तर्गत चुने हुए लाभार्थियों को अनेक क्षेत्रों में प्रशिक्षण दिया जाता है। निम्न तालिका में विभिन्न जातियों के लाभार्थियों को अलग-अलग क्षेत्रों में सृजित किये गए रोजगार को दर्शाया गया है :—

व्यवसाय	जातियां				
	आर्थिक रूप से पिछड़ी जाति	पिछड़ी जाति	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति	योग
सिलाई का काम (महिलाएं)	2(9.53)	7(12.96)	11(10.48)	2(10.00)	22(11.00)
मुर्गी पालन	2(9.53)	13(24.07)	34(32.38)	5(25.00)	54(27.00)
बढ़ई का काम	6(28.56)	10(18.52)	25(23.81)	6(30.00)	47(23.50)
मिट्टी के बर्तन बनाने का काम	2(9.53)	8(14.81)	10(9.52)	2(10.00)	22(11.00)
बिजली का काम	4(19.04)	10(18.52)	12(11.43)	—	26(13.00)
अन्य (चटाई बनाना, डबल रोटी बनाना, फिटर, टर्नर आदि का काम)	5(23.81)	6(11.12)	13(12.38)	5(25.00)	29(14.50)
कुल संख्या	21	54	105	20	200

उपरोक्त तालिका से पता चलता है कि कुल 200 लाभार्थियों में से 11 प्रतिशत को सिलाई के काम में, 27 प्रतिशत को मुर्गीपालन में, 23.50 प्रतिशत को बढ़ई के काम में, 11 प्रतिशत को मिट्टी के बर्तन के काम में और 13 प्रतिशत को बिजली के कारोबार में काम मिला हुआ है। अंतिम मिश्रित श्रेणी में केवल 14.50 प्रतिशत लाभार्थियों को रोजगार मिला है। अध्ययन के दौरान अनेक लाभार्थियों ने बताया कि उन्हें गांवों पर आधारित प्राथमिक क्षेत्र के कार्यक्रमों जैसे पशुपालन, भेड़ पालन, मधुमक्खी पालन, रेशम कीट पालन, खरगोश पालन आदि की आवश्यकता है।

नए कार्यक्रमों को प्राथमिकता

ट्राइसेम के अन्तर्गत लाभार्थी अपने वातावरण के अनुरूप ग्रामीण लोगों के लिए अधिक लाभप्रद कार्यक्रमों को अपनाना पसंद करते हैं। निम्नलिखित तालिका से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न जाति समूहों का युवा वर्ग ट्राइसेम के अन्तर्गत पशु पालन, मधुमक्खी पालन, रेशम कीट पालन,

खरगोश पालन, भेड़ पालन और मशरूम की खेती आदि जैसे नए कार्यक्रम शुरू करने को तरजीह देता है। कुल 200 लाभार्थियों में से 28.58 प्रतिशत आर्थिक रूप से पिछड़ी जाति समूह, 22.22 प्रतिशत पिछड़ी जाति समूह, 38.09 प्रतिशत अनुसूचित जातियां और 45 प्रतिशत जनजातियां ट्राइसेम कार्यक्रम के अन्तर्गत गैर-कृषि रोजगार प्राप्त करने के लिए एक अच्छे कार्यक्रम के रूप में 'पशुपालन' को पसंद कर रहे हैं। इस कार्यक्रम को सर्वाधिक महिलाएं पसंद करती हैं।

योजना	जातियां				
	आर्थिक रूप से पिछड़ी जातियां	पिछड़ी जातियां	अनुसूचित जातियां	अनुसूचित जन जातियां	योग
पशुपालन रेशम कीट पालन	6(28.58)	12(22.22)	40(38.09)	9(45.00)	67(33.50)
भेड़ पालन	5(23.81)	8(14.82)	20(19.05)	2(10.00)	35(17.50)
खरगोश पालन	3(14.28)	16(29.62)	20(19.05)	5(25.00)	44(22.00)
मशरूम खेती	2(9.53)	8(14.81)	15(14.28)	4(20.00)	29(14.50)
मधुमक्खी पालन	4(19.04)	4(7.40)	6(5.72)	—	14(7.00)
	1(4.76)	6(11.12)	4(3.81)	—	11(5.50)
कुल संख्या	21	54	105	20	200

ऐसी आशा की जाती है कि उपरोक्त बताई गई योजनाएं यदि सही और प्रभावशाली ढंग से अमल में लाया जाए तो इससे निश्चित रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और पुरुषों को रोजगार के अतिरिक्त अवसर मिलेंगे और वे अपने परिवार की आय में वृद्धि कर सकेंगे। यदि ग्रामीण युवाओं को अपने-अपने स्थानों पर ही लाभकारी गैर-कृषि रोजगार उपलब्ध कराया जाता है तो गांवों से शहर की ओर जाने को रोका जा सकता है। इन कार्यक्रमों से एक दूसरा लाभ यह है कि महिलाओं को रोजगार के लिए भी अपने घरों से दूर नहीं जाना पड़ेगा। ग्रामीण युवा कार्यक्रमों को यदि सही दिशा देकर कार्यान्वित किया जाए तो ग्रामीण क्षेत्रों में समग्र विकास के लिए एक उचित वातावरण तैयार किया जा सकता है।

इस प्रकार ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार पर ट्राइसेम कार्यक्रम के प्रभाव से सम्बन्धित आंकड़ों का विश्लेषण इस बात की पुष्टि करता है कि "ग्रामीण युवाओं के लिए जितने अधिक गैर-कृषि रोजगार कार्यक्रम होंगे, ग्रामीण युवाओं को उतने ही अधिक रोजगार के बेहतर अवसर मिलेंगे।"

निष्कर्ष

अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि ट्राइसेम ग्रामीण रोजगार और विकास की समस्या को कम करने के लिए छोटी-सी भूमिका अदा कर पाया है। ग्रामीण युवाओं को अपना रोजगार दिलाने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में काफी कुछ करना बाकी है। गैर-कृषि रोजगारों को सफलतापूर्वक बढ़ाने के लिए यह अनिवार्य है कि ग्रामीण गरीब युवाओं को द्वितीय और तृतीय क्षेत्रों की बजाय प्राथमिक क्षेत्र में कार्यकुशलता और हुनर प्रदान किया जाए।

लाभार्थियों का चयन करने में सम्बन्धित अधिकारियों को सर्तकता बरतनी चाहिए ताकि ऐसे गरीब परन्तु शिक्षित युवाओं का चुनाव हो सके जो उस प्रशिक्षण के प्रति गम्भीर हों, लगन से काम सीखें और प्रशिक्षण के पश्चात् अपने काम को सफलतापूर्वक चला सकें। उन्हें सभी बुनियादी सुविधाएं दी जानी चाहिए ताकि वे अपने चुने हुए क्षेत्र में सफल हो सकें। ऐसे युवा अपने-अपने क्षेत्र में एक आदर्श उदाहरण बनें और दूसरे लोग उनके अनुयायी बन सकें।

अनुवाद : किरण गुप्ता

पाठक कृपया ध्यान दें

जब यह अंक छप रहा था तो केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री एस.बी. चव्हाण द्वारा लोकसभा में 1989-90 का आम बजट पेश करते हुए की गई घोषणा के अनुसार दो कार्यक्रमों — राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम को मिलाकर एक कार्यक्रम बना दिया गया है।

गांवों में रोजगार के प्रयास

डा.एस.के. सिंह

हमारे देश में बेरोजगारी की समस्या की व्यापकता तथा गंभीरता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि सातवीं योजना में लक्ष्य यह रखा गया है कि 'काम' और 'उत्पादता' पर बल देते हुए पिछली योजनाओं में बेरोजगारी दूर करने के बच गए काम को ही पूरा किया जाए. मार्च, 1985 में उपलब्ध अनुमानों के अनुसार 5 वर्ष से अधिक उम्र के 92 लाख लोग बेरोजगार थे, जिनमें से 49 लाख 70 हजार बेरोजगार गांवों में रहने वाले थे।

भारत की ग्रामीण आबादी में एक चौथाई संख्या 15 से 25 साल के युवकों की है इतने बड़े मानव संसाधन की इस समय राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया में कोई सीधी भूमिका नहीं है। ग्रामीण विकास में गति लाने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए युवकों के चहुंमुखी विकास और उन्हें राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया में सहभागी बनाने के कार्यक्रम तैयार करने के काम को छठी योजना के बाद से राष्ट्रीय योजना प्रक्रिया का अंग बनाया गया है। इसी के अनुरूप केन्द्र तथा राज्य सरकारें युवक मंडल या युवक मंडलों की स्थापना को प्रोत्साहित करती रही हैं। इससे युवकों को अपने तथा गांवों के विकास के लिए प्रयास करने में संस्थागत समर्थन प्राप्त हो जाता है।

यह बात उल्लेखनीय है कि पौष्टिकता कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम और परिवार कल्याण जैसे अनेक कार्यक्रमों को गांवों में लागू करने में युवक केन्द्रों या युवक क्लबों की मदद ली जा रही है। यह तो युवकों के कल्याण का पक्ष है। किन्तु एक और व्यापक तथा अधिक महत्वपूर्ण आयाम यह है कि ग्रामीण युवकों को रोजगार दिया जाए। इसमें ऐसे अवसर उपलब्ध कराने की योजना भी शामिल है, जिनमें युवक स्वरोजगार के लिए अपने साधनों का इस्तेमाल कर सकें। इसी उद्देश्य से केन्द्र ने राज्य सरकारों के सहयोग से 1979 में स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवकों का प्रशिक्षण कार्यक्रम 'ट्राइसेम' प्रारम्भ किया।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बिताने वाले 18 से 35 वर्ष की आयु के लोगों को ऐसे कौशल तथा टेक्नोलॉजी की जानकारी देना है जिससे वे अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमताओं के अनुरूप अपना काम धंधा चलाने लायक बन जाएं। परन्तु बाद में उद्देश्य को संशोधित करके इसमें ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी पाने लायक बनाने के प्रयास भी सम्मिलित कर लिए गए। ग्रामीण महिलाओं को विशेष प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम भी शामिल किया गया। इसके लाभार्थियों का चयन करते हुए अनुसूचित जातियों, जनजातियों, भूतपूर्व सैनिकों तथा नौ महीने का प्रौढ़ शिक्षा पाठ्यक्रम पूरा करने वालों को प्राथमिकता दी जाती है।

प्रशिक्षण पाने वालों में 30 प्रतिशत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोग तथा एक तिहाई महिलाएं होनी चाहिए। छठी योजना में प्रत्येक वर्ष एक विकास खण्ड में 40 युवक-युवतियों के हिसाब से कुल 2 लाख लोगों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य रखा गया।

इस योजना के अंतर्गत गांव में ही प्रशिक्षण पाने वाले को 75 रुपये प्रतिमाह और गांव से बाहर प्रशिक्षण लेने वाले व्यक्ति को मुफ्त आवास सुविधा के साथ 150 रुपये तथा आवास सुविधा न होने पर 200 रुपये की वृत्ति दी जाती है। प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति को 500 रुपये का एक टूल किट भी दिया जाता है जिससे वह अपना धंधा शुरू कर सकता है। प्रशिक्षकों को भी 50 रुपये प्रति प्रशिक्षार्थी प्रतिमाह की दर से पारिश्रमिक और कच्चे माल के लिए सहायता के रूप में 25 रु. से 200 रु. प्रति पाठ्यक्रम प्रतिमाह मिलते हैं। उन्हें प्रशिक्षण पूर्ण होने पर प्रति प्रशिक्षार्थी 50 रुपये पुरस्कार भी दिया जाता है। प्रशिक्षण संस्थानों को भी इसी प्रकार की

वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। यह सारा खर्च समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के बजट से पूरा किया जाता है और प्रशिक्षण के बाद भी इस कार्यक्रम के अंतर्गत इन लोगों को वित्तीय सहायता दी जाती है। इस सहायता के अनुसार वित्तीय संस्थाएं भी प्रशिक्षार्थियों को ऋण आदि उपलब्ध कराती हैं।

इस योजना के अंतर्गत खर्च केन्द्र और राज्य सरकारें आधा आधा वहन करती हैं और इसकी प्रशासनिक जिम्मेदारी जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों की रहती है। खण्ड विकास अधिकारी "ट्राइसेम" कार्यक्रम को लागू करते हैं।

छठी योजना में 10.05 लाख के लक्ष्य की तुलना में 9.79 लाख लोगों को इस कार्यक्रम के माध्यम से प्रशिक्षण दिया गया। इनमें से 4.64 लाख लोगों ने अपना काम धंधा शुरू किया और करीब 44 हजार को नौकरियां मिल गईं। इस प्रकार कुल प्रशिक्षित युवकों में से 49.4 प्रतिशत ने स्वरोजगार शुरू किया और 52.9 प्रतिशत युवकों को कोई न कोई रोजगार मिल गया। "ट्राइसेम" कार्यक्रम के अंतर्गत प्रशिक्षण के खर्च तथा प्रशिक्षार्थियों को वृत्ति आदि देने पर 55 करोड़ रुपये व्यय हुए। प्रति प्रशिक्षार्थी खर्च लगभग 825 रुपये बैठता है। स्वरोजगार परियोजनाओं के लिए सहायता पर 9 करोड़ 23 लाख रुपये खर्च किए गए। प्रशिक्षित लोगों में 33.1 प्रतिशत अनुसूचित जातियों/जनजातियों के और 35.2 प्रतिशत महिलाएं थीं।

सातवीं योजना में वर्ष 1985-86 में जनवरी 86 तक 1.03 लाख व्यक्तियों को प्रशिक्षण प्राप्त हुआ। इनमें से 39.1 प्रतिशत लोग अनुसूचित जातियों/जनजातियों के थे। महिलाओं का प्रतिशत 37.2 था। प्रशिक्षित लोगों में 47 हजार अर्थात 45.5 प्रतिशत ने अपना व्यवसाय शुरू किया और 6 हजार अर्थात 51.2 प्रतिशत प्रशिक्षित लोग रोजगार पाने में सफल हो गए।

"ट्राइसेम" कार्यक्रम की कमियां दूर करने तथा इसे और उपयोगी व सार्थक बनाने के उद्देश्य से कई अध्ययन किए गए हैं। इनमें इस कार्यक्रम को लागू करने में आने वाली कठिनाइयों तथा समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। ये इस प्रकार हैं:—

(क) व्यवसायों का पता लगाना

यह बात सामने आई है कि बहुत कम व्यवसायों में प्रशिक्षण दिया जाता है। 100 में से 60 व्यवसाय ऐसे हैं, जिनमें प्रशिक्षार्थियों की रुचि है। इसके अलावा स्थानीय संसाधनों, कौशल तथा मण्डियों को ध्यान में रखते हुए स्वरोजगार के उपयुक्त तथा मजबूत व्यवसायों का पता लगाने के प्रयास नहीं किए गए। इस प्रकार के सर्वेक्षण कराने के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था की जानी चाहिए।

प्रशिक्षण की योजना बनाते समय पहले व्यवसाय फिर प्रशिक्षण देने वाली संस्था और कारीगरों का चयन और उसके बाद ही उपयुक्त प्रशिक्षार्थियों का चयन किया जाना चाहिए। इससे संबंधित व्यवसायों के इच्छुक युवक-युवतियों का ही चयन हो सकेगा और कठिनाइयों से बचा जा सकेगा। इससे एक ही व्यवसाय में अधिक लोगों को प्रशिक्षण देने की विवशता भी नहीं रहेगी। परम्परागत तथा नए व्यवसायों में समुचित समन्वय भी आवश्यक है।

(ख) प्रशिक्षण संस्थाएं तथा प्रशिक्षण विधि

मुख्यतया खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों, पोलिटेक्निक इंजिनियरी कालेजों तथा कुछ स्वयंसेवी संगठनों द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है। किन्तु कुछ संस्थाएं अचानक प्रशिक्षक बन गई हैं, जबकि उनके पास न तो आवश्यक अनुभव है, न ही सुविधाएं। कुछ प्रशिक्षण केन्द्र अपने पाठ्यक्रम तथा प्रशिक्षण विधि में समय-समय पर सुविधानुसार परिवर्तन कर देते हैं। इन केन्द्रों में पर्याप्त मात्रा में तथा अच्छे स्तर के उपकरण व औजार नहीं होते और यदि उपकरण हों तो कच्चा माल नहीं होता जिससे प्रशिक्षार्थी पूरी उत्पादन प्रक्रिया नहीं सीख पाते। इससे प्रशिक्षार्थी न तो पूरा कौशल ग्रहण कर पाते हैं और न ही उनमें उद्यम की भावना और उत्साह विकसित होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में परम्परागत टेक्नोलोजी ऐसी अपनाई जाती है जो केवल अपनी खपत की वस्तुएं तैयार करने के लिए उपयुक्त है। उत्पादन आधारित टेक्नोलोजी वहां विद्यमान नहीं है। इसलिए प्रशिक्षण केन्द्रों में उत्पादन तथा उत्पादन आधारित टेक्नोलोजी सिखाई जानी चाहिए ताकि ये लोग प्रशिक्षण के पश्चात बड़े स्तर पर वस्तुओं का उत्पादन व निर्माण करके अपने आर्थिक उत्थान और ग्रामीण विकास में सहायक बन सकें। इसके साथ-साथ जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को भी गांवों में नए व्यवसायों

की बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था करने का अधिकार होना चाहिए। प्रशिक्षण केन्द्रों को टेक्नोलोजी से संबंधित नवीनतम जानकारी उपलब्ध करानी चाहिए जिससे प्रशिक्षार्थी नई परिस्थितियों के अनुरूप अपनी तकनीकों में संशोधन कर सकें। प्रशिक्षण के दौरान आधुनिक तकनीक तथा नवीनतम औजारों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। इससे प्रशिक्षण का स्तर अच्छा रहेगा। प्रशिक्षण की अवधि, पाठ्यक्रम तथा प्रशिक्षण के दैनिक घंटों आदि पहलुओं की समय-समय पर समीक्षा करते रहना भी आवश्यक है।

(ग) निर्देश पहुंचने में देरी

राज्य सरकार के निर्देश सम्बंधित एजेंसियों तक पहुंचने में बहुत देरी हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप कार्यक्रम का उद्देश्य ही विफल हो जाता है। इस बात के प्रयास किए जाने चाहिए कि महत्वपूर्ण सूचनाएं और निर्देश सम्बंधित एजेंसियों को समय पर मिल जाएं।

(घ) कच्चा माल और विपणन सुविधाएं

एक ऐसी संस्था होनी चाहिए जो प्रशिक्षण के लिए आवश्यक कच्चा माल सप्लाई करे तथा तैयार वस्तुओं की बिक्री का काम संभाले। केन्द्र ने इस सम्बंध में एक योजना राज्यों को भेजी है। कुछ राज्यों में प्रत्येक जिले में जिला आपूर्ति और विपणन एजेंसी बनाने की दिशा में प्रयास शुरू भी किए जा रहे हैं। इस प्रकार की एजेंसी जिला स्तर पर बनाना ही उचित है और इसकी शाखाएं खण्ड स्तर पर खोलनी चाहिए। "ट्राइसेम" के अंतर्गत प्रशिक्षण लेने वालों के उत्पादों की प्रदर्शनी तथा बिक्री शिविर आयोजित किए जा सकते हैं और इनके बारे में पर्याप्त प्रचार किया जाए ताकि लोग इन वस्तुओं को खरीद सकें। इसके अलावा सरकार स्वयं अपने विभागों के लिए इन वस्तुओं को खरीद सकती है।

(ङ) प्रगति की निगरानी

योजना को कारगर ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक है कि इसके काम की लगातार निगरानी की जाए और प्रभावशाली सूचना प्रणाली विकसित की जाए। इससे तालुका, जिला या राज्य स्तर पर निर्णय करने में सुविधा रहेगी। वर्तमान सूचना व्यवस्था अपर्याप्त है। समय-समय पर योजना की समीक्षा करके लाभार्थियों के चयन, व्यवसायों के चयन तथा वर्गीकरण, प्रशिक्षक कारीगरों की नियुक्ति, विभिन्न संस्थाओं के लिए प्रशिक्षार्थियों का निर्धारण तथा विभिन्न संस्थाओं में तालमेल जैसे पहलुओं की जांच करनी चाहिए। नीचे से ऊपर उच्च अधिकारियों तक सूचनाओं के प्रवाह की भी समुचित व्यवस्था आवश्यक है।

(च) प्रशिक्षण के बाद की सुविधाएं

इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए प्रशिक्षण पूरा होने के बाद संबंधित व्यक्ति को रोजगार दिलाने की सुविधाओं पर ध्यान देना अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रशिक्षण के उपरान्त मिलने वाली सुविधाओं से ही प्रशिक्षार्थी को किसी योजना में भाग लेने की प्रेरणा व उत्साह मिलता है। यदि प्रशिक्षण पूर्ण करने पर उसे बुनियादी ढांचा, ऋण, कच्चा माल जैसी सुविधाएं नहीं मिलतीं तो उसके लिए काम शुरू करना और अपनी आजीविका कमा पाना कठिन हो जाएगा। इसलिए क्षेत्र की विकास एजेंसियों को प्रशिक्षार्थियों को सब प्रकार की सुविधाएं देने के लिए कदम उठाने चाहिए।

(छ) प्रचार

गांवों में लोगों को इस योजना की जानकारी ही नहीं है और वे योजना के अंतर्गत मिलने वाले ऋण का पूरा लाभ नहीं उठा पाते। आधुनिक जन-संचार माध्यमों को गांवों के युवकों तक इस कार्यक्रम के अंतर्गत युवकों को दी जाने वाली प्रशिक्षण तथा स्वरोजगार की सुविधाओं की जानकारी पहुंचानी चाहिए। इन व्यवसायों के उत्पादों की बिक्री के लिए मेले और विशेष बाजार लगाए जा सकते हैं। प्रशिक्षण केन्द्रों को जिला स्तर पर प्रदर्शन कार्यक्रम आयोजित करके नई टेक्नोलॉजी की जानकारी निचले स्तर पर कारीगरों तक पहुंचानी चाहिए।

सार रूप में कहा जा सकता है कि जरूरतमंद युवकों की दशा सुधारने के लिए गंभीर प्रयास करने की आवश्यकता है ताकि वे जल्दी से जल्दी गरीबी की रेखा से ऊपर आ सकें। सातवीं योजना में करीब 2 करोड़ 60 लाख युवकों को सहायता देने का लक्ष्य है। इसके लिए सबसे अधिक ध्यान प्रशिक्षण पर देना होगा। सातवीं योजना के दौरान कार्यक्रम को नया रूप देने का भी अभियान चलाया जाना चाहिए। तभी यह लाखों ग्रामीण युवकों को अपनी आर्थिक समस्याएं सुलझाने में सक्षम बना पाएगा तथा ग्रामीण भारत में बेरोजगारी और युवकों की कम उत्पादकता के अभिशापों को समाप्त करने में सहायक हो सकेगा।

अनुवाद : सुभाष चन्द्र सेतिया

खेती के अलावा रोजगार के अन्य अवसर जरूरी हैं

नवीन जोशी

अनुमान है कि देश की 70 करोड़ आबादी में से करीब 40 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे जिंदगी गुजार रहे है। इनमें से ज्यादातर लोग गांवों में रहते हैं। देश की करीब आधी जनसंख्या, लगभग 35 करोड़ लोग भूमिहीन हैं जो गांवों में कृषि या वनों से संबंधित कामों से जीवन-यापन कर रहे हैं। करीब 8 करोड़ भू-स्वामी किसानों के 70 प्रतिशत सीमान्त और छोटे किसान हैं, जिनके पास क्रमशः एक हैक्टेयर से कम या एक से दो हैक्टेयर जमीन है।

देश के 5,75,936 गांवों में से 5,51,623 की जनसंख्या एक हजार से कम है। प्रति गांव औसत 953 व्यक्ति है, जबकि औसत क्षेत्रफल 670 8 हैक्टेयर है। केरल में प्रति गांव औसत जनसंख्या 16,835 है, जबकि हिमाचल प्रदेश में यह सबसे कम 204 है। हमारी जनसंख्या का 70 प्रतिशत कृषि और संबंधित रोजगारों पर निर्भर है। बिहार में यह निर्भरता सबसे अधिक 82 प्रतिशत और केन्द्र शासित क्षेत्रों में सबसे कम 23 प्रतिशत है। अन्य राज्यों में यह निर्भरता 50 प्रतिशत से 80 प्रतिशत के बीच है। करीब 33 प्रतिशत कृषि-जोतें आधे से एक हैक्टेयर के बीच की हैं। 50 प्रतिशत से अधिक किसानों के पास इतनी ही जमीन है और उनकी आर्थिक स्थिति बेहतर बनाने के लिए उन्हें खेत के अलावा और कोई रोजगार भी उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

योजनाओं ने क्या दिया ?

हमारी नियोजन प्रक्रिया में 1950 के दशक के दौरान तेज आर्थिक विकास पर बल दिया गया। उस समय यह मान लिया गया था कि ऐसा करने से रोजगार के ज्यादा अवसर स्वतः ही उपलब्ध हो सकेंगे लेकिन ऐसा हुआ नहीं। उसके बाद तीसरी योजना के समय से पूरक रोजगार कार्यक्रम बनाये जाने लगे और विशेष श्रम-मूलक कार्यक्रम भी शुरू किये गये। लेकिन समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.) की शुरुआत से पहले खास प्रगति नहीं हुई। इस कार्यक्रम में यह बात स्वीकार की गई कि गांवों में गरीबी, बेरोजगारी और अधूरे रोजगार की समस्याओं के समाधान के एक पक्षीय और थोड़े वक्त के कार्यक्रमों से काम नहीं चलेगा। इस कार्यक्रम में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के जरिए स्थानीय-मानवीय, जैविक और प्राकृतिक संसाधनों का गांव के गरीब और साधनहीन गरीबों के हित में समुचित उपयोग पर ध्यान दिया गया। लेकिन पिछले दिनों किए गए अनेक शोधों से पता चला है कि समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत प्राप्त की जाने वाली धनराशि का उचित उपयोग नहीं किया गया है और यह पैसा सभी लोगों तक नहीं पहुंचा है। ऐसी स्थिति से ज्यादा खतरनाक और निराशाजनक कोई और बात नहीं हो सकती। इस स्थिति में यह जरूरी है कि गांवों के गरीब लोगों को खेती के अलावा कोई दूसरा रोजगार भी उपलब्ध कराया जाए, अन्यथा गांव में वर्तमान ढांचे के कारण गरीबी दूर करने की योजनाओं का उचित लाभ नहीं मिल सकेगा।

वनों से जुड़े हैं अनेक रोजगार

एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि कृषि में ज्यादा पैसा लगाने से उत्पादकता तो बढ़ती है, लेकिन रोजगार में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं होती है। इसलिए हमें केवल ज्यादा पैसा लगाने पर जोर नहीं देना चाहिए। बल्कि ऐसे विकास कार्यक्रम चलाने चाहिए जिनसे छोटे किसानों को दूसरा रोजगार उपलब्ध हो सके। उदाहरण के लिए, देश के अधिकांश ग्रामीण हिस्सों में, किसी भी अन्य क्षेत्र की तुलना में, वानिकी से सबसे ज्यादा रोजगार मिल सकता है। यह और भी महत्वपूर्ण तत्व है कि ऐसे रोजगार के अवसर ज्यादातर दूरदराज के पिछड़े क्षेत्रों में उपलब्ध हैं जहां अन्य क्षेत्रों से रोजगार के अवसर प्रायः नहीं हैं। वनों से जुड़े कामों की यह भी विशेषता है कि इसे बिना विशेष योग्यता वाला या थोड़ी बहुत योग्यता वाला श्रमिक भी, बिना किसी खास प्रशिक्षण के कर सकता है। साथ ही वानिकी में रोजगार की संभावनाएं करीब-करीब पूरे देश में हैं और सारे वर्ष खासतौर

से खेती में आराम के दिनों में यह रोजगार उपलब्ध रहता है। निम्न क्षेत्रों में वानिकी के जरिये रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है :—

1. पेड़ लगाने का काम, जिसमें पौध लगाना, वनोत्पादों को तैयार कराना शामिल है।

2. लट्ठे तैयार करने, वनों के उत्पादों के संभालने, दवाइयों वाले पौधे तथा लीसा आदि निकालने का काम।

3. मकान और इमारतें आदि बनाने जैसे सहयोगी काम।

4. लकड़ी—चिराई मिलों और वन आधारित उद्योगों जैसे औद्योगिक काम।

पेड़ लगाने के कामों में बीज जमा करना, जमीन साफ करना, नर्सरी बनाना, जगह को ठीक करना, पौध लगाना और उनकी देखभाल करना शामिल हैं। वन-उत्पाद जमा करने का काम वनों में ही किया जा सकता है और कुछ हद तक इसे वनीकरण के नये क्षेत्र में भी किया जा सकता है। वनों के लिए सड़क-निर्माण का सहयोगी काम भी महत्वपूर्ण है। औद्योगिक कामों से अतिरिक्त रोजगार जुटाने में काफी मदद मिल सकती है। ये सभी काम उपलब्ध संसाधनों के बेहतर उपयोग और अतिरिक्त उत्पादन से जुड़े हुए हैं।

हमारे देश में जमीन तो सीमित है लेकिन श्रमिकों की कोई कमी नहीं है। इसलिए हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि प्रति हैक्टेयर उत्पादकता तो अधिकतम हो ही, लेकिन साथ ही ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोजगार भी मिले। इस तरह के विकास कार्यक्रम के लिए जरूरी है की वह एकतरफा न हो और सहायता कार्यों और राहत के उपायों पर निर्भर न हो, यह पूरी अर्थव्यवस्था पर प्रभाव डाले और नई-नई गतिविधियों को प्रोत्साहन मिले।

कृषि आधारित तथा कुटीर उद्योग

राष्ट्रीय कृषि आयोग ने इस बात पर जोर दिया है कि पहाड़ी इलाकों में संसाधन विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक सुविधाओं का बेहतर ढांचा भी विकसित किया जाना चाहिए। ऐसे क्षेत्रों में वनों तथा चरागाहों का विकास, फलों के बगीचों और अन्य कीमती फसलों की खेती तथा दुधारू पशुओं और मुर्गीपालन जैसे कामों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। हमें पूरे देशभर में कृषि आधारित उद्योग खोलने चाहिए ताकि किसानों और उनके परिवारों को अंशकालिक रोजगार मिल सके। ऐसे उद्योगों के कुछ उदाहरण हैं—धान कुटाई, रूई की धुनाई, डेयरी उद्योग, तेल पिराई, जूट की खेती और चीनी मिल आदि। फलों और सब्जियों को डिब्बाबंद करने और उनके परिरक्षण में बड़ी संख्या में लोगों को रोजगार दिया जा सकता है। कृषि से जुड़े अनेक उप-उत्पादों को अनेक उद्योगों के लिए कच्चे माल के तौर पर इस्तेमाल करने की नई तकनीकी संभावनाएं हैं। उदाहरण के लिए चावल की भूसी को ईंधन के तौर पर इस्तेमाल किया जा सकता है और चावल की खली से तेल निकाला जा सकता है। ऐसे उद्योगों से कुटीर और ग्रामीण उद्योगों के विकास में मदद मिलेगी जो उद्योग केवल उपभोक्ता वस्तुएं ही नहीं, बल्कि किसानों के लिए जरूरी कृषि उपकरण जैसी पूंजीगत वस्तुएं भी बना सकता है। इसके अलावा, ऐसे सहायक और पूरक उद्योग भी हो सकते हैं जो निर्धारित गुणवत्ता के कृषि उपकरण और साज-समान तैयार कर सकें।

गांवों में कुटीर और छोटे उद्योग स्थापित करने से गांवों के लोगों का शहरों की ओर पलायन भी रोका जा सकता है। थोड़े बहुत साधनों से ही ऐसी औद्योगिक इकाइयां शुरू की जा सकती हैं और हमें ऐसी शीर्षस्थ विपणन संस्थाएं बनानी होंगी जो इन इकाइयों के उत्पादों की बिक्री की व्यवस्था करें, ऋण उपलब्ध करायें, अनुसंधान और विकास में मदद करें तथा अन्य सेवाओं की व्यवस्था करें। छोटी इकाइयों का काम केवल निर्धारित गुणवत्ता का उत्पादन करना होना चाहिए। जापान में यह प्रयोग सफल रहा है और हमारे गांवों में भी इससे रोजगार के अनेक अवसर जुटाये जा सकते हैं। डेयरी उद्योग, पशुपालन, मुर्गी पालन जैसे कामों पर भी ज्यादा जोर देना चाहिए। गांवों की सड़कें ठीक करने, उन्हें बाजारों से जोड़ने का काम अगर बड़े पैमाने पर किया जाये तो इससे हमारे गांवों का चेहरा ही बदल जाएगा और हमारी जनसंख्या के बहुत बड़े हिस्से को सही अर्थों में आर्थिक आजादी मिल सकेगी। इसके बाद विकास की प्रक्रिया में जन-जन की पूरी भागेदारी सुनिश्चित करने के लिए भूमि सुधार कार्यक्रमों को जोर शोर से लागू किया जाना चाहिए।

सहकारी प्रयास जरूरी है

यह भी जरूरी है कि वर्तमान सरकारी आन्दोलन में दूर दराज के ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को भी शामिल किया जाये। सहकारी प्रयासों से भी तेल पिराई, धान कुटाई, मूंगफली, दाल की मिलों, डेयरियों जैसे कृषि आधारित उद्योगों के जरिये

गांव के युवकों को बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी विपणन और सेवा समितियों द्वारा कृषि सेवा केन्द्र खोलने से छोटे किसानों को कृषि उत्पादन बढ़ाने और रोजगार जुटाने में मदद मिल सकती है। ग्रामीण युवकों को गांवों से भागकर रोजगार की तलाश में शहर आने की प्रवृति छोड़ने के लिए कहा जाना चाहिए। बेहतर उत्पादन होने से गांवों के सभी किसानों को लाभ होगा। धनवान लोगों द्वारा कृषि उत्पादों के संसाधन के जो कारखाने खोले गये हैं वे उभोक्ताओं और ग्रामीणों दोनों को लूटते हैं। सहकारिता का तरीका आदर्श तरीका है क्योंकि इसमें छोटे कामगर एक साथ मिलकर बेहतर सेवाएं और कच्चा माल, मोल - भाव की बेहतर स्थितियों के साथ बेहतर कीमतों पर प्राप्त कर सकते हैं साथ ही उन्हें सहकारिताओं द्वारा बेहतर बाजार सुविधाएं भी उपलब्ध होती हैं।

भारत में कृषि से जुड़े कच्चे माल पर आधारित उद्योग केवल 45 प्रतिशत हैं। खाद्य पदार्थों के संसाधन से लेकर चमड़ा बनाने तक के कृषि अधारित उद्योग उत्पादन तथा बिक्री, गांव तथा शहर, पूंजी तथा श्रम और औद्योगिक तथा कृषि उत्पादों के उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच अनिवार्य सम्बन्ध कायम करते हैं। दूध को ठंडा करने, कीटाणु मुक्त करने और बोतलों में भरने के काम से दूध उत्पादन के क्षेत्र में रोजगार के अनेक अवसर जुटे हैं और इससे दूध उत्पादन का काम निरन्तर बढ़ता जा रहा है और ज्यादा आधुनिक तरीके से किया जा रहा है। धान कुटाई, आटा चक्की, दाल मिलों, मिर्च के पैकेट, अचार तैयार करने जैसे कामों में बड़ी संख्या में बिना किसी विशेष योग्यता वाले और थोड़ी विशेष योग्यता वाले लोगों को रोजगार मिलता है। धान कुटाई की मिलें बड़ी-छोटी हो सकती हैं और इसलिए देशभर में हर स्थान पर खोली जा सकती हैं। इस तरह कृषि-आधारित उद्योगों से गावों में बड़ी संख्या में लोगों को अनेक तरीके के रोजगार मिल सकते हैं और गांवों के लोगों को सहायक रोजगार मिलने से आर्थिक गतिविधियों का आधार व्यापक हो सकता है। गुड़ और खांडसारी उद्योग ऐसा उदाहरण है जिससे साबित होता है कि कृषि आधारित उद्योगों से गांवों में जमीन के मालिक तथा भूमिहीन सभी लोगों को रोजगार मिल सकता है।

सिंचाई

व्यापक क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध कराने, ज्यादा फसलें उगाने, ज्यादा उत्पादन वाली किस्में विकसि करने आदि से गांवों में रोजगार के अवसर तेजी से बढ़ेंगे इससे गैर-कृषि क्षेत्रों में भी रोजगार के अवसर बढ़ेंगे राष्ट्रीय कृषि आयोग ने सुझाव दिया है कि सरकार को बड़ संख्या में सिंचाई और निकासी परियोजनाएं शुरू करन चाहिए ताकि छोटे और सीमान्त किसानों को लाभ हो सके आयोग का विचार है कि छोटे किसानों को 25 प्रतिशत औ सीमान्त किसानों को 33.5 प्रतिशत सहायता दी जान चाहिए। आयोग की राय में, आज सीमान्त किसान दूस धन्धें भी कर रहा है ताकि उसकी आमदनी बढ़ सके औ न्यूनतम जरूरतें पूरी हो सकें। पशु पालन और मुर्गी पालन जैसे उद्योग कृषि के ही उप-उत्पादों से जुड़े हुए हैं और उनस खास फायदा नहीं होता। चूंकि इन उद्योगों से पर्याप्त आमदनी नहीं होती इसलिए किसान को कृषि तथा गैर-कृषि क्षेत्रों में मजदूरी करनी पड़ती है। मजदूरी का काम मनमर्ज का नहीं होता और बाजार में खास तरीके के काम की उपलब्धता देखते हुए किसान को स्वयं को इन कामों के अनुरूप ढालना पड़ता है। इस तरह किसानों को अपनी खेती पर पूरा ध्यान देने का मौका नहीं मिलता। इसके साथ ही सिंचाई का फायदा भी तभी होता है जबकि किसान के पास आधे हैक्टेयर से ज्यादा जमीन हो। लेकिन अगर जमीन भी टुकड़ों में बंटी हुई हो तो संभव है कि कुछ टुकड़ों में सिंचाई न हो सके। इस तरह किसान का संकट तो समाप्त नहीं होता सिर्फ सिंचाई या अन्य साधन मुहैया करा देना ही पर्याप्त नहीं है, किसान को तो अपनी स्थिति सुधारने के लिए भुगतान की शक्ल में लाभ मिलना चाहिए।

इस बात में दो राय नहीं है कि अगर सही मायने में गांव का विकास किया जाना है तो गांव के गरीब लोगों (जिनमें छोटे और सीमान्त किसान, भूमिहीन मजदूर, दूसरे की जमीन पर खेती करने वाले किसान और पिछड़े वर्गों के लोग शामिल हैं) की आर्थिक और सामाजिक जिंदगी बेहतर बनाने के लिए उन्हें दूसरा रोजगार उपलब्ध कराया जाना चाहिए। गांवों के गरीब लोगों का जीवन स्तर सुधारने के दो ही तरीके हैं – या तो सीधे-सीधे भूमि की उत्पादकता में वृद्धि की जाये या गांवों के लोगों को दूसरा रोजगार भी उपलब्ध कराया जाये।

अनुवाद : राजेन्द्र भट्ट
14/192, मालवीय नगर
नई दिल्ली–17

ट्राइसेम तथा ग्रामीण विकास

ओम प्रकाश दत्त

स्वाधीनता के बाद हमें जिन समस्याओं से जूझना पड़ा है इनमें तीन प्रमुख व सबसे गंभीर समस्यायें हैं गरीबी, अज्ञानता तथा बीमारी। अज्ञानता व बीमारी वास्तव में गरीबी से अभिन्न रूप से जुड़ी हैं इसलिये गरीबी को दूर करने के लिए समय-समय पर अनेक नीतियां व कार्यक्रम चलाये गये। पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि व उद्योगों के विस्तार तथा अन्य उपायों के माध्यम से गरीबी के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा गया। 1975 में इस सम्बन्ध में एक विशेष कार्यक्रम हाथ में लिया गया। यह था बीस सूत्री कार्यक्रम जिसके कार्यान्वयन के दौरान हुये परिवर्तनों तथा नयी चुनौतियों के सामने आने से इसमें जनवरी 1982 में संशोधन किया गया। चार वर्ष बाद फिर इसे नया रूप दिया गया तथा 1986 में तैयार हुये इस नये कार्यक्रम को 1987-88 की वार्षिक योजना के साथ लागू किया गया। इसमें निर्धनता को दूर करने पर विशेष बल दिया गया था।

इस बीच गरीबी के विरुद्ध संघर्ष के रूप में छठी योजना अवधि में ही समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम नामक एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम जनता के निर्धनतम वर्गों तक विकास व प्रगति के लाभ पहुंचा कर उनका जीवन स्तर सुधारने के उद्देश्य से तैयार करके वर्ष 1978-79 में कुछ चुने हुये खंडों में सीमित स्तर पर लागू किया गया। दो अक्तूबर, 1980 को इसका विस्तार देश के सभी खंडों में कर दिया गया। इसी दौरान वर्ष 1979 में ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण की केंद्रीय योजना (ट्राइसेम) भी आरंभ की गयी।

ट्राइसेम कार्यक्रम का उद्देश्य यह है कि गरीबी की रेखा के नीचे जीवन बसर कर रहे ग्रामीण परिवारों के 18 से 35 वर्ष तक की आयु के युवाओं को कुछ चुने हुये व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया जाये ताकि वे कृषि तथा संबद्ध क्षेत्रों, उद्योगों सेवाओं में अपना कोई काम-धंधा शुरू कर सकें। प्रशिक्षण पूरा कर लेने पर युवा प्रशिक्षार्थी समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने का हकदार हो जाता है। उसे अपने व्यवसाय के बारे में सहायता के लिये आवेदन करने पर कम ब्याज पर ऋण व सहायता तथा कच्चा माल व बिक्री आदि की सुविधा मिल सकती है। यह प्रशिक्षण स्थानीय स्तर पर पुराने, अनुभवी कारीगरों द्वारा अथवा औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों तथा लघु-शिल्प संस्थानों आदि में दिलाया जाता है। इस दौरान उन्हें वजीफा भी मिलता है व साथ में उसके व्यवसाय से संबद्ध औजार, सामान आदि भी निःशुल्क दिया जाता है। इस प्रशिक्षण के लिये युवा प्रायः उन्हीं परिवारों से लिये जाते हैं जिनकी वार्षिक आय 6400 रु तक हो। इसके अलावा यह कोशिश की जाती है कि प्रशिक्षणार्थियों में कम से कम एक तिहाई युवतियां हों। इन्हें प्रशिक्षण तीन वर्गों के व्यवसायों में दिया जाता है। पहला वर्ग मूल क्षेत्र के कार्यों का है जिसमें बीज उत्पादन, फल-सब्जी उत्पादन, मछली पालन, मुर्गी, सूअर, भेड़-बकरी पालन, रेशम के कीड़े पालने, शहद उत्पादन आदि शामिल हैं। दूसरा क्षेत्र उन कार्यों के प्रशिक्षण के बारे में है जो कच्चे माले पर आधारित हैं जैसे माचिस, आतिशबाजी, अगरबत्तियां, तेल, साबुन, चमड़े का सामान, गुड़, कत्था, दस्तकारी, बेंत का सामान, बर्तन आदि का उत्पादन। प्रशिक्षण का तीसरा क्षेत्र उन कार्यों का है जो मूल अथवा प्राथमिक क्षेत्र जैसे कृषि, पशु पालन, वानिकी तथा दूसरे क्षेत्र के पूरक अथवा सहायता कार्य हैं। इनमें खाद

बीज, कृषि यंत्रों की सप्लाई व मरम्मत, कुओं, नलकूपों की खुदाई, खेत उत्पाद भंडारण व बिक्री, पशुओं के लिये चारा, आहार सप्लाई, दूध, अंडों आदि की बिक्री, घरेलू उपकरणों की मरम्मत, गोबर-गैस संयंत्रों की स्थापना व मरम्मत कालीन बुनाई, राजगीरी, मिस्त्री, बढ़ई, बिजली, आदि का काम, रिक्शा चालन, नौका, वाहन, ट्रैक्टर चालन, मरम्मत आदि काम शामिल हैं। छठी योजना व सातवीं योजना में अब तक इस योजना के अंतर्गत साढ़े सोलह लाख से अधिक ग्रामीण युवा प्रशिक्षण पा चुके हैं। इनमें से 6 लाख से अधिक युवा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के थे। इसी अवधि में 6 लाख 20 हजार से अधिक युवतियां भी प्रशिक्षण प्राप्त कर चुकी हैं। प्रशिक्षण प्राप्त इन युवाओं में से लगभग 7 लाख 80 हजार स्वरोजगार आरंभ कर चुके हैं जबकि 1 लाख 67 हजार से अधिक युवा मजदूरी पर रोजगार कर रहे हैं। प्रशिक्षण कार्यों के लिये 1987-88 के दौरान 10.95 करोड़ रुपये से अधिक खर्च किये गये जिनमें से 5.50 करोड़ रुपये केंद्र ने दिये। चूंकि यह एक प्रशिक्षण-आधारित कार्यक्रम है, इसलिये यह आवश्यक है कि प्रशिक्षण सुविधायें पर्याप्त हों। इसके लिये प्रशिक्षण संस्थानों का मजबूत व भरोसेमंद होना आवश्यक है। अतः इनकी सहायता के लिये भी एक योजना चलायी जा रही है।

यह कार्यक्रम वास्तव में इस बात को ध्यान में रखकर तैयार किया गया था कि देश में व्यापक बेरोजगारी है और विशेषकर गांवों में यह समस्या बड़ी विकट है। शिक्षा प्रणाली भी रोजगारोन्मुख नहीं है। आर्थिक विपन्नता के कारण बच्चों को पढ़ाई छोड़नी पड़ती है व मजदूरी करने पर मजबूर होना पड़ता है। दूसरी तरफ यह तथ्य भी है कि देश में भूमि, जल, खनिज, वन, पशुधन प्रचुर मात्रा में हैं। हमारी हस्तशिल्प परंपरायें भी समृद्ध हैं। लेकिन गांवों में आम लोगों का जीवन-स्तर इतना निम्न है कि अपनी आय में मामूली वृद्धि तो दूर, वे पेटभर भोजन भी जुटा पाने में असमर्थ रहते हैं। इस प्रकार संसाधन तो मौजूद हैं लेकिन माध्यम उपलब्ध नहीं हैं। इनके अभाव में प्रोत्साहन व उद्यमों का भी अभाव है। जन-संसाधन की गांवों में कमी नहीं है। केवल उन्हें प्रशिक्षण व समुचित सहायता की आवश्यकता है। इसी कमी को दूर करने के लिए ग्रामीण युवाओं के लिए स्वरोजगार प्रशिक्षण योजना आरंभ की गयी। ताकि वे या तो गांवों में ही अपना कोई काम शुरू कर सकें, या फिर मरम्मत, देखभाल जैसी सेवाओं को चला सकें अथवा कहीं रोजगार पा सकें। इस का लक्ष्य यह था कि गांवों में प्रशिक्षण प्राप्त युवा तैयार किये जायें जो अपने क्षेत्र को स्वावलंबी बनाने में योगदान कर सकें, शहरों को पलायन रोक सकें तथा स्थानीय संसाधनों का भरपूर उपयोग स्थानीय मांग को पूरा करने में कर सकें, जिसके फलस्वरूप ग्रामीण विकास तेज हो सके।

इसमें संदेह नहीं कि देश में कुछ स्थानों पर यह ग्रामीण विकास के लिये एक उत्प्रेरक कार्यक्रम साबित हुआ है। पर कई जगह इसके परिणाम वांछित स्तर के नहीं रहे हैं। कई अध्ययनों से इसकी विशेषतायें व कमियां-दोनों ही सामने आयी हैं। कई क्षेत्रों में यह कार्यक्रम युवा अथवा उद्योग जैसे विभागों के अंतर्गत चलाया जा रहा है जिस कारण पूरा तालमेल नहीं हो पाया है। वास्तव में यह योजना उसी विभाग के अधीन हो जो समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिये जिम्मेदार है, क्योंकि ये दोनों कार्यक्रम एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। यह विभाग अन्य संबद्ध विभागों से जैसे-उद्योग, वित्त से समुचित समन्वय के बल पर इस कार्यक्रम को अधिक सुदृढ़ बना सकता है। इसके अलावा इस योजना के लिये पंचायतों, स्वैच्छिक संस्थाओं का अधिक से अधिक सहयोग लेना भी श्रेयस्कर रहेगा क्योंकि स्थानीय परिस्थितियों से ये भली-भांति परिचित होती हैं। अभी इस कार्यक्रम से संबद्ध एजेंसियों-जिला ग्रामीण विकास एजेंसी, लीड बैंक, जिला उद्योग केंद्र तथा अन्य तकनीकी विभागों के बीच भी समन्वय की काफी कमी देखने में आयी है। लेकिन जहां कहीं समन्वय पर्याप्त व मजबूत है वहां परिणाम भी अच्छे रहे हैं। इस कार्यक्रम में लाभार्थी तथा उसके अनुकूल प्रशिक्षण कार्य का पता लगाने, आवेदन पत्र पर विचार करने, ऋण-सहायता देने, योजना शुरू कराने, इन्हें चलवाने व ऋण की अदायगी कुछ ऐसे चरण हैं जहां समन्वय हर हालत में मजबूत व त्वरित होना चाहिये। प्रायः देखने में आया है कि इन समस्याओं से निपटने वाली एजेंसी की छः माह तक कोई बैठक ही नहीं हुई।

यह प्रायः महसूस किया जा रहा है कि व्यवसाय का प्रशिक्षण तो दिया जा रहा है लेकिन बाद में उसे, स्वयं रोजगार के तौर पर चलाने की जानकारी का अभाव है जिस कारण लाभार्थी स्वरोजगार की बजाय दूसरे के यहां काम करना अधिक सुगम समझ लेते हैं। कुछ राज्यों में संस्थानों में इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रशिक्षण व अन्य नियमित

विद्यार्थियों के प्रशिक्षण में कोई भेद नहीं रखा गया है। प्रशिक्षण का स्तर भी अक्सर पर्याप्त नहीं रहता। प्रशिक्षण सुविधाओं-मशीनों, औजारों, कार्यशालाओं की कमी या अनुपलब्धता की भी शिकायतें मिली हैं। प्रशिक्षण के दौरान उत्पादन पर भी ध्यान देना होगा और इन उत्पादों की बिक्री का महत्व भी रेखांकित करना होगा ताकि प्रशिक्षार्थी काम सीखने में पूरा ध्यान लगायें व अच्छा उत्पादन निकालने के लिये प्रेरित हों। प्रशिक्षण कार्यक्रमों की भी सार्वधिक समीक्षा नियमित रूप से नहीं की जा रही है जिससे प्रशिक्षार्थी के मन में काम के प्रति विश्वास व भरोसा पूरी तरह नहीं बन पाता। कहीं-कहीं तो एक ही प्रशिक्षक तीन-तीन खंडों में प्रशिक्षण देता है जिससे वह कहीं भी पूरा ध्यान दे पाने में असमर्थ रहता है। किसी जगह तो समुचित तकनीकी सहायता ही उपलब्ध नहीं होती। यद्यपि इस कार्यक्रम में स्त्रियों को विशेष स्थान दिया गया है लेकिन अधिकांश क्षेत्रों में या तो इन्हें प्राथमिकता नहीं दी जाती या फिर इनके लिये विशेष उपयोगी प्रशिक्षण कार्यक्रम नहीं हैं।

प्रशिक्षण के बाद काम शुरू करने के लिये वित्तीय सहायता व तकनीकी सलाह नितांत अनिवार्य हैं। ऋण के लिये आवेदन भरना व अपनी स्कीम को स्पष्ट कर पाना लाभार्थियों के लिये सबसे बड़ी समस्या है जिसकी तरफ प्रायः अधिकारी उदासीन दिखलायी पड़ते हैं। इन्हें इस बारे में स्पष्ट निर्देश फिर जारी किये जाने चाहिये और पंचायतों को इस काम में पूरी तरह शामिल किया जाना चाहिये, ताकि शोषण व अनुचित तरीकों की गुंजाइश बिल्कुल न रहे। वैसे इस काम के लिये सारी सुविधायें, सहायता एक ही जगह उपलब्ध करने के प्रयास होने चाहिये ताकि आवेदक को व्यर्थ की भाग-दौड़ न करनी पड़े। इसके लिये जिला उद्योग केंद्र उचित हो सकते हैं। इन्हें ऋण देने में ग्रामीण बैंकों, सहकारी बैंकों को अधिक से अधिक सम्बद्ध किया जाना चाहिये। वित्तीय सहायता प्रणाली को देखने से पता चलता है कि ऋण व सब-सिडी राशि दोनों मिलाकर भी स्व-रोजगार को बारह माह चालू रखने के लिये पर्याप्त नहीं होते। कई स्थानों पर लाभार्थी को कुल दो हजार रुपये ही मिले जोकि काम-धंधे के लिये बहुत कम हैं। इस कम राशि से व्यवसाय को बढ़ा पाने में सहायता नहीं मिल सकती। कहीं-कहीं ऋण की राशि जिला ग्रामीण विकास एजेंसी द्वारा प्रस्तावित राशि से कम कर दी गयी, या फिर एक ही व्यवसाय के लिए अलग-अलग आवेदकों को अलग-अलग राशि का ऋण दिया गया और कोई कारण बताने की आवश्यकता नहीं समझी गयी। कहीं पर बैंकों आदि ने लाभार्थी द्वारा आवेदित व्यवसाय को दरकिनार करके अपनी मर्जी से उस पर नयी स्कीम थोप दी है और उसे उसी के लिये ऋण लेने पर विवश कर दिया।

अक्सर स्वरोजगार योजनायें पर्याप्त विपणन सुविधा व सहायता के अभाव में ठप्प पड़ जाती हैं। फलतः ऋण की अदायगी भी अनियमित होती है, व लाभार्थी का उत्साह समाप्त होने लगता है। इसके लिये यह आवश्यक है कि कच्चे माल की सप्लाई पर्याप्त व नियमित रूप से सुनिश्चित हो, तथा इसके डिपो बना दिये जायें, तैयार सामान सार्वजनिक वितरण प्रणाली, सहकारी भंडारों से भी अधिक से अधिक बेचने के प्रबंध किये जायें तथा विभिन्न संस्थानों व सरकारी विभागों को यह सामान अधिक से अधिक अपने उपयोग के लिये भी व दूसरी योजनाओं तथा कार्यक्रमों के लिये उपलब्ध कराने के लिये तरजीह के तौर पर खरीदने के स्पष्ट निर्देश हों। इस संबंध में ग्रामीण व कुटीर उद्योगों के लिये अलग से विपणन निगम बनाने का सुझाव भी विचार योग्य है। इन उत्पादों के लिये विशेष हाट या अन्य स्थानों पर मेला, बिक्री—प्रदर्शनियां भी समय-समय पर लगायी जा सकती हैं। वैसे इस तरह की प्रदर्शनियां केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, गोवा, दमण आदि में लगायी गयी हैं जो बहुत सफल रही हैं। जब तक सरकारी स्तर पर विपणन, माल के स्तर में सुधार, सामान लाने-ले जाने आदि में जोरदार उपाय नहीं किये जाते, तब तक बिचौलिये व व्यापारी ग्रामीण कारीगरों का शोषण जारी रखेंगे।

इसमें संदेह नहीं कि ग्रामीण स्वरोजगार योजना से ग्रामीण क्षेत्र का नक्शा बदल रहा है। इस योजना के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के लिये शिक्षा व्यवस्था पर फिर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता पैदा हुई है और यह बात फिर स्पष्ट हुई है कि ग्रामीण युवाओं को शिक्षा के साथ-साथ किसी न किसी व्यवसाय का प्रशिक्षण देना न केवल उनके लिये उपयोगी है, बल्कि उनके क्षेत्र के विकास में भी सहायक होगा। यह स्पष्ट है कि वेतन पर काम करने की संभावना व गुंजाइश सीमित है। कृषि, वानिकी, पशुपालन जैसे मूल क्षेत्रों में जनससाधन को खपा पाने की क्षमता सीमित है। इसलिये इनसे सम्बद्ध क्षेत्रों व इनके पूरक, सहायक क्षेत्रों का विस्तार आवश्यक है क्योंकि इन पर मूल क्षेत्र तो निर्भर है ही, साथ में इनमें स्व-रोजगार के अवसर जुटाने की भी व्यापक क्षमता है।

लाभकारी पपीता

इन्दु

पपीता अलग-अलग स्थानों पर विभिन्न नामों से जाना जाता है यथा अंग्रेजी में इसे पैपेवा (Papava), पपया (Papaya), मेलन ट्री, संस्कृत में नलिकांदल, चिर्मिट, बर्मी भाषा में इसे हिम्ववथी, तमिल में पप्पलि, हिन्दी में अत्यधिक प्रचलित शब्द पपीता।

अमेरिका की खोज के समय ही सर्वप्रथम पपीते के पौधे का ज्ञान प्राप्त हुआ जो शीघ्र ही अपने स्वादिष्ट स्वाद के कारण समस्त दुनिया में व्याप्त हो गया। मध्य अमेरिका, मेक्सिको की खाड़ी के तटों, ब्राजील और वेस्ट इण्डीज का यह देशीय वृक्ष माना जाता है। इसके अतिरिक्त भारत, लंका, हवाई, फिलिपाइन्स, दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में भी उगाया जाता है।

पपीता के रसायनिक संगठन इस प्रकार हैं– आर्द्रता 89.6 प्रतिशत, प्रोटीन 0.5 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 9.5 प्रतिशत, खनिज़ पदार्थ 0.4 प्रतिशत, कैल्शियम 0.01 प्रतिशत, फासफोरस 0.01 प्रतिशत। पपीता अपने आप में अनेक गुण समेटे हुए है। यदि इसका सेवन किया जाए तो अनेक प्रकार से इसका फायदा उठाया जा सकता है। इसके कुछ लाभ या गुण निम्न प्रकार हैं–

जिन देशों में पपीता उगता है उनमें पपीते का दूध (पेपेन) औषध समझा जाता है। भोजन का ठीक प्रकार से न पचना, मल बन्ध आदि की शिकायत रहने वालों तथा जिन्हें मांस और दालें न पचते हों उन्हें पेपेन का प्रयोग लाभकारी सिद्ध होता है। इसकी सहायता से रेशम पर से चिपचिपा पदार्थ हटाया जाता है तथा चमड़ा उद्योग में खालों को मुलायम बनाने के मसाले में भी इसे डाला जाता है।

पपीता खाने से अमाशय बलवान होता है, भूख भी लगने लगती है तथा गैस (वायु) भी पास होती रहती है। पपीते को अन्य सब्जी के समान सब्जी के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं। यदि घीया कस में कस लें तो उसको रायते के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। पेट के अनेक रोगों जैसे-अफारा आना, भारीपन अनुभव करना, खट्टी डकारों का आना आदि में पपीते का प्रयोग लाभकारी होता है। इसके अतिरिक्त जिन्हें अरुचि, अनिद्रा की शिकायत रहती हो उनको भी इसके प्रयोग से लाभ पहुंचता है। त्वचा के रोगों में पके पपीते का प्रयोग भी हितकर होता है। अच्छे पके, धुले हुए पपीते के गूदे को चेहरे पर या शरीर पर उबटन के समान मलकर नहाने से, देह निखर जाती है, चेहरा कान्तिमान हो जाता है। कच्चे फल के दूध के प्रयोग से गालों की फुन्सियां (Pimples) साफ हो जाती हैं। दाद वाली जगह पपीते का दूध लगाने पर शीघ्र आराम पहुँचता है।

खूनी बवासीर के रोगियों को पके पपीते खाने पर लाभ होता है। सिर में सीकरी के कारण बाल झड़ने की स्थिति में पके या अधपके पपीते का गूदा सिर पर मलने के पश्चात नहाने पर बाल झड़ने में कमी आती है। पपीता खाने से मूत्र खुलकर आता है, जिन व्यक्तियों की मूत्र बंद की शिकायत होती है उन्हें इसका अवश्य सेवन करना चाहिए।

कपड़ों पर से दाग छुड़ाने के लिए पके पपीते को काटकर, गूदे को दाग पर रगड़ने पर दाग मिट जाता है। कई स्थानों पर पपीते के पत्तों को तम्बाकू की जगह पीते हैं। पपीतों को मुरब्बे के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। यदि मनुष्य स्वस्थ एवं निरोग रहना चाहता है तो उसे नियमित रूप से पपीते का प्रयोग करते रहना चाहिए।

आर.सी.–38
रेडक्रास फ्लेट्स
निकट विनय नगर पुलिस स्टेशन
सरोजिनी नगर, नई दिल्ली

बजट और ग्रामीण विकास

परमेश कश्यप

संसद के बजट अधिवेशन के प्रथम दिन राष्ट्रपति श्री आर. वेंकटरामन ने अपने अभिभाषण में सरकार की नीतियों को स्पष्ट करते हुए कहा था कि "हमारा सीधा प्रहार गरीबी पर है – हमने बेरोजगारी को घटाने के लिए भरसक प्रयत्न किया है। हमारा मार्गदर्शक सिद्धान्त रहा है कि कमजोर, अभावग्रस्त और दलित वर्ग के लिए न्याय और उन्नति के सुवअसर प्रदान किए जाएं।"

वित्त मंत्री श्री शंकरराव चव्हाण ने 28 फरवरी को लोकसभा में जो बजट प्रस्ताव पेश किए उनसे यह स्पष्ट है कि सरकार ने इसी दिशा में ठोस कदम उठाए हैं। इस बात का भरसक ध्यान रखा गया है कि आर्थिक विकास और आधुनिकीकरण के लिए धन जुटाने के जो प्रावधान हों उनका बोझ गरीब जनता पर न पड़े, बल्कि सामाजिक न्याय की अधिकाधिक व्यवस्था हो सके। बहुत-सी वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क में पांच प्रतिशत की वृद्धि की गई है। धन जुटाने के लिए यह जरूरी भी था। लेकिन आम खपत की वस्तुओं की दरों में कोई परिवर्तन नहीं होगा। इनमें चीनी, चाय, काफी, मिट्टी का तेल, डीजल, वनस्पति और बिजली के बल्ब आदि शामिल हैं। गैर जरूरी वस्तुओं पर कर बढ़ाया गया है। वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण के अन्त में स्पष्ट रूप से कहा कि "विकास के मार्ग की यात्रा कठिन और लम्बी है। इसके लिए बलिदान देना पड़ता है। अब प्रश्न यह उठता है कि भावी विकास और समृद्धि के लिए ऐसा बलिदान कौन करेगा। प्रस्तुत बजट प्रस्तावों में इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट और निश्चित रूप से दे दिया गया है। समृद्ध लोगों को ही अधिकांश भार सहन करना होगा ताकि समाज के कमजोर वर्ग के लोग समृद्धि के मधुर फल को प्राप्त करने के हिस्सेदार बन सकें।"

नयी रोजगार योजना

ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी कम करने के लिए इस बजट में एक विशेष योजना तैयार की गई है। नेहरू की जन्म शताब्दी के अवसर पर इसका नाम 'जवाहर लाल नेहरू रोजगार योजना' रखा गया है। इसके अंतर्गत गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले प्रत्येक परिवार के कम से कम एक सदस्य को रोजगार के पूरे अवसर दिए जाएंगे। इस योजना के लिए दिया जाने वाला धन राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रमों के अंतर्गत उपलब्ध धन व्यवस्था के अतिरिक्त होगा। कार्यक्रम की विस्तृत रूपरेखा भी तैयार की जा रही है। वैसे 1989-90 वर्ष में इस योजना के लिए 500 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। यह योजना शुरू में 120 ऐसे पिछड़े जिलों में शुरू की जाएगी जहां बेरोजगारी की समस्या बहुत विकट है। वित्त मंत्री ने कहा कि इस नयी योजना के लागू करने से जहां एक ओर दरिद्र परिवारों के रहन सहन में सुधार होगा तो वहीं पिछड़े क्षेत्रों में सामाजिक रूप से उपयोगी और उत्पादक गतिविधियों को बढ़ावा मिलेगा। इस योजना की लागत को पूरा करने के लिए पांच सौ करोड़ रुपये के प्रावधान की वसूली का तरीका भी पूर्णतया सामाजिक न्याय पर आधारित है। जिन करदाताओं की वार्षिक आय 50 हजार रुपये से अधिक है उनकी आय पर आठ प्रतिशत की दर से अधिभार लगाया जा रहा है।

ग्रामीण रोजगार के लिए समन्वित प्रयास

रोजगार के अवसर बढ़ाने के उद्देश्य से चलाये जा रहे दो प्रमुख कार्यक्रमों राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और भूमिहीन ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम को एक सूत्र में पिरोने का प्रस्ताव है ताकि इस दिशा में और प्रभावी कदम उठाए जा सकें। इस समन्वित कार्यक्रम को विकेंद्रीकृत रूप से चलाया जाएगा। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के 1980 में प्रारंभ होने से अब तक 30.55 करोड़ श्रम दिवसों से अधिक रोजगार के अवसर पैदा किए जा चुके हैं। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम 1983 में शुरू किया गया था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 12.62 करोड़ श्रम दिवसों से अधिक रोजगार के अवसरों का सृजन किया जा चुका है। इस कार्यक्रम की इन्दिरा आवास योजना के अंतर्गत अब तक चार लाख 24 हजार से अधिक घर बनाए गए हैं। इसके अलावा सामाजिक वानिकी, स्कूल भवनों, सड़कों, लघु सिंचाई और

भूसरक्षक की कई योजनाएं भी चलाई गई हैं। इन दोनों कार्यक्रमों के लक्ष्य बहुत कुछ एक से ही हैं और यह सर्वथा उचित ही है कि इन दोनों को सम्मिलित रूप से चलाया जाए। पूरे देश में इन संबंधी कार्यक्रमों को लागू करने में जो खर्च होगा उसकी 75 प्रतिशत व्यवस्था केंद्र द्वारा की जाएगी। इस कार्यक्रम के अंतर्गत तीन सौ 77 करोड़ रुपये खर्च होंगे और वित्त वर्ष के दौरान 19 लाख से अधिक ग्रामीण परिवारों को सहायता दी जाएगी। इस कार्यक्रम का लाभ प्राप्त करने वालों को सामूहिक बीमा योजना का लाभ भी मिलेगा। कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि जिन व्यक्तियों को इसका लाभ मिले उनमें कम से कम 30 प्रतिशत अनुसूचित जातियों अथवा जनजातियों के हों और तीस प्रतिशत महिलाएं हों। इस बजट में ग्रामीण विकास, सामाजिक सेवाओं तथा खाद्य और कपड़े के संबंध में आर्थिक सहायता के लिए 9,374 करोड़ रुपये की व्यवस्था कर दी गई है।

कृषि

कृषि हमारे ग्रामीण क्षेत्रों का ही नहीं पूरे देश की आर्थिक व्यवस्था का मुख्य आधार है और हमारी योजनाओं में इस क्षेत्र को प्राथमिकता लम्बे अर्से से दी जा रही है। केंद्र और राज्य सरकारों के बजटों में कृषि के लिए भारी आर्थिक सहायता दी जाती है। 1980-81 के बाद कृषि उर्वरकों के लिए सहायता राशि का व्यय बहुत ज्यादा बढ़ गया है और इस वर्ष भी इसमें वृद्धि की जा रही है। यह खर्च इस वर्ष 5,173 करोड़ रुपये तक पहुंच जाएगा। इससे आशा है कि वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों द्वारा कृषि को उपलब्ध कराए जाने वाले कुल ऋण की रकम में 1989-90 के दौरान चार हजार करोड़ रुपये से भी अधिक की वृद्धि होगी।

फसल ऋणों पर ब्याज दर में कमी

फसल ऋणों पर ब्याज की दरों में उत्तरोत्तर कमी की जा रही है। गत वर्ष पन्द्रह हजार रुपये तक के फसल ऋणों पर डेढ़ प्रतिशत से ढाई प्रतिशत तक कमी की गई थी और अधिक राहत देने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक ने पन्द्रह हजार से पच्चीस हजार रुपये तक के फसल ऋणों पर लिए जाने वाले ब्याज की मौजूदा अधिकतम दर 14 प्रतिशत से घटाकर बारह प्रतिशत करने का आदेश जारी कर दिया है।

ग्रामीण जल आपूर्ति

ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की व्यवस्था पर पिछले कुछ वर्षों से विशेष ध्यान दिया जा रहा है। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत इस व्यवस्था के लिए केंद्र और राज्यों द्वारा वित्तीय प्रौद्योगिकी और प्रशासनिक सहायता दी जा रही है। 1986 में इस उद्देश्य के लिए एक राष्ट्रीय पेयजल मिशन गठित किया गया था। देशभर में 1,61,772 समस्याग्रस्त गांवों का पता लगाया गया था। आशा है कि 1.41 लाख गांवों में पेयजल की व्यवस्था वर्तमान वित्त वर्ष में ही पूरी हो जाएगी और 17500 गांवों में 1989-90 वर्ष में पेयजल की व्यवस्था हो जाएगी। ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की व्यवस्था पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। मार्च 1989 के अंत तक 4.51 लाख गांवों में बिजली पहुंच जाने की आशा है और इसके साथ ही 75.7 लाख पंपसेट भी बिजली से चलने लगेंगे। 1989-90 में 1.93 लाख कुएं खोदने का लक्ष्य रखा गया है।

खाद्य संसाधन

खाद्य उत्पादनों के अधिकाधिक उपयोग और किसानों की आमदनी में वृद्धि के लिए खाद्य संसाधन और डिब्बाबंदी उद्योग का विशेष महत्व है। इसे देखते हुए एक अलग से मंत्रालय स्थापित किया गया है और इस दिशा में कई कदम उठाए गए हैं।

पिछले वर्ष खाद्य पदार्थों के संरक्षण के लिए शीतागारों की स्थापना करने के लिए प्रयुक्त होने वाले घटकों और सहायक पुर्जों के उत्पादन शुल्क को बजट प्रस्तावों के माध्यम से 40 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया गया है। अब 15 प्रतिशत की इस रियायती दर को मशीनरी के हिस्सों तथा कम्प्रेसरों पर भी लागू किया जाएगा जिनका उपयोग खाद्य पदार्थों और डेरी उत्पादों के परिवहन के लिए बनाई जाने वाली प्रशीतित गाड़ियों में किया जाता है।

मखनिया दूध के पाउडर और संघटित दूध पर लगने वाले उत्पादन शुल्क की दर को 15 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत किया गया है। इसके साथ-साथ कई अन्य खाद्य पदार्थों के उत्पादन शुल्क की दर को भी पन्द्रह प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत किया गया है। इनमें मछली, मांस टेपियोका और सागो जैसे डिब्बाबंद पदार्थ शामिल हैं।

खादी और ग्रामोद्योग

खादी तथा ग्रामोद्योग और राज्यों के खादी ग्रामोद्योग

बोर्डों द्वारा आयात की जाने वाली कच्ची ऊन पर शुल्क में पूरी छूट दिए जाने का प्रस्ताव है। कच्चे रेशम की सीमा शुल्क दर को 75 प्रतिशत मूल्यानुसार से घटाकर 50 प्रतिशत मूल्यानुसार किया जा रहा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के लिए खादी और ग्रामोद्योग आयोग का पुनर्गठन किया जा रहा है ताकि इसकी गतिविधियों को और व्यापक बनाया जा सके। वित्त वर्ष के दौरान 33 ऐसे नए उद्योग धंधे चुने गए हैं जिन्हें विशेष प्रोत्साहन दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त 41 और उद्योग धंधे धीरे-धीरे इस कार्यक्रम के अंतर्गत लिए जाएंगे।

खादी और ग्रामोद्योग द्वारा अथवा उसकी सहायता से बेचे जाने वाले ग्रामीण उद्योगों में बने उत्पादों के संबंध में जो रियायत उपलब्ध है वही रियायत अब फर्नीचर और चीनी मिट्टी के उत्पादों के संबंध में दी जा रही है।

दियासलाई एक ऐसी मूलभूत आवश्यकता है कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी इसके बिना काम नहीं चला सकता। इसके अलावा दियासलाई उद्योग से ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को काम मिलता है। इसे ध्यान में रखते हुए दियासलाई उद्योग के उत्पाद शुल्कों के ढांचे पर पुनर्विचार किया गया। सभी तरह के शुल्क में कमी की गई है। इससे ग्यारह करोड़ रुपये की राजस्व हानि होगी। सबसे कम शुल्क दियासलाई बनाने वाली ऐसी इकाइयों पर है जो पिछड़े उद्योग की श्रेणी में आती हैं और जहां यंत्रों को इस्तेमाल नहीं होता।

पिछड़े क्षेत्रों का औद्योगीकरण

सरकार का यह बराबर प्रयत्न रहा है कि पिछड़े क्षेत्रों का अधिक से अधिक औद्योगीकरण हो ताकि विकास का लाभ अधिक से अधिक लोगों तक पहुंच सके। इस बजट में भी ऐसे क्षेत्रों में औद्योगीकरण के लिए 61 नए विकास केंद्र खोलने के लिए बीस करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में कहा कि अगर जरूरत हुई तो यह प्रावधान और बढ़ा दिया जाएगा।

सामाजिक सेवाएं

ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक सेवाओं की कमी सदियों से चली आ रही है। इसे दूर करने के लिए सतत् प्रयत्न किए जा रहे हैं। सामाजिक सेवाओं के लिए बजट में 3396 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है और इनमें विशेष ध्यान छोटे बच्चों की देखभाल, महिलाओं के विकास और अपंगता निरोधक कार्यक्रमों पर दिया गया है। दुर्भाग्य से जो लोग अपंग हो गए हैं उनके पुनर्वास पर भी काफी ध्यान दिया गया है।

समन्वित बाल विकास सेवा कार्यक्रम का और विस्तार किया जा रहा है। एक हजार सात सौ विकास खण्डों में यह कार्यक्रम पहले से ही लागू है और बजट में 500 और नए विकास खण्डों को इस कार्यक्रम के अंतर्गत लाने का प्रावधान किया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य गरीब बच्चों के पोषण, उनके स्वास्थ्य और उनकी शिक्षा की व्यवस्था करना है।

दरिद्रतम लोगों को सीधे मदद

गरीबों को सीधे लाभ पहुंचाने वाली योजनाएं इसलिए जरूरी हैं कि आर्थिक विकास के कारण जो समृद्धि पैदा होती है उनका लाभ नीचे तक नहीं पहुंचता। बहुत से ऐसे अभागे हैं जिन्हें आजादी के इतने वर्षों बाद भी कोई लाभ नहीं पहुंचा है। दुर्भाग्य है कि बहुत-सी महिलाओं के पास तन ढकने के लिए ठीक से कपड़ा भी नहीं है। ऐसी औरतों की मदद के लिए साड़ियों के मुफ्त वितरण का एक नया कार्यक्रम शुरू किया जा रहा है। कहने की जरूरत नहीं कि बेसहारा औरतों को साल में एक धोती बांटना बहुत जरूरी है। पर हमें यह भी देखना होगा कि अगले साल उस महिला में यह सामर्थ्य हो कि वह किसी की दया पर निर्भर न रहे बल्कि स्वयं साड़ी खरीदने की स्थिति में हो।

सरकार इस तरह का प्रयास भी कर रही है। वित्त मंत्री ने बताया कि समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले 250 लाख से अधिक परिवारों को आमदनी देने वाले काम धंधे करने के लिए सहायता दी गई है। छठी योजना के प्रारंभ से इस कार्यक्रम पर कुल मिलाकर 10,000 करोड़ रुपये खर्च किए जा चुके हैं।

सेक्टर 4/551,
आर. के. पुरम, नयी दिल्ली 110022

आर्थिक समीक्षा–1988-89: अर्थव्यवस्था सुखद स्थिति में

विनोद बाली

स्वाधीनता के बाद हमारी अर्थव्यवस्था में जिस तेजी से निरंतर सुदृढ़ता आयी है उसका श्रेय हमारी नियोजित विकास प्रक्रिया को जाता है जोकि पंचवर्षीय योजना व्यवस्था के कारण संभव हो सकी है। इन योजनाओं के अंतर्गत जो नीतिगत उपाय किये जाते रहे हैं उनसे हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में आवश्यक मूलभूत क्षमतायें विकसित हुई हैं जिनके बल पर वह कम उत्पादन, सूखे जैसी विषम तथा विकट परिस्थितियों से निकल कर विकास व प्रगति की दिशा में गतिमान रहने में सफल हो सकी है। स्वस्थ अर्थव्यवस्था के मुख्य पोषक क्षेत्र होते हैं – कृषि, उद्योग व आधारभूत क्षेत्र। आइये देखें नये वित्त वर्ष के बजट से पूर्व प्रस्तुत की गयी, 1988-89 की आर्थिक समीक्षा में इन क्षेत्रों तथा अर्थव्यवस्था के अन्य पहलुओं की वस्तुस्थिति तथा संभावनाओं के बारे में क्या बताया गया है।

कृषि उत्पादन

समीक्षा के अनुसार 1988-89 वर्ष के दौरान कृषि उत्पादन के मामले में अर्थव्यवस्था का सुदृढ़ पुनरूत्थान हुआ है, औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि की गति बनी रही है जोकि सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर 9 प्रतिशत रहने की पूरी संभावना में स्पष्ट है। पिछले दो वर्षों के दौरान देश में शताब्दी का जो भयंकरतम सूखा पड़ा था उससे अर्थव्यवस्था पर भारी दबाव पड़ा और कठिन परिस्थिति पैदा हो गयी थीं। लेकिन इसे झेलने में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था ने एक निश्चित बुनियादी दृढ़ता तथा सक्षमता का परिचय दिया है। लगातार मानसून के अभाव में 1987-88 में गंभीर सूखे से कृषि विकास की गति रूक गयी थी तथा सातवीं योजना के पहले तीन वर्षों के दौरान उत्पादन लक्ष्य से कम हुआ था। इस गंभीर स्थिति के बावजूद पिछले वर्ष कृषि उत्पादन में केवल 2 प्रतिशत तक ही कमी हुई। दूसरी ओर औद्योगिक उत्पादन में गतिशीलता बनी रही व उसमें 7.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसके फलस्वरूप सकल राष्ट्रीय उत्पाद में 3.6 प्रतिशत की वास्तविक वृद्धि हुई। मुद्रास्फीति की दर कुल मिलाकर 10.6 प्रतिशत रही। वर्ष 1987-88 में देश के 35 वर्षागम उपमंडलों में 21 उपमंडलों में गंभीर सूखे का मुख्य रूप से चावल, दालों, मूंगफली, कपास व पटसन की फसल पर अधिक प्रभाव पड़ा। लेकिन कृषि निवेशों की त्वरित उपलब्धि व अनुसंधान तथा विस्तार कार्यों के जरिये कृषि अर्थव्यवस्था का समर्थन दिया गया व सूखे से निपटने के अग्रिम उपाय व्यापक तौर पर व युद्ध-स्तर पर किये गये। रबी फसल को सम्यक स्तर पर बनाये रखने की सुनिश्चित व्यवस्था की गयी। इनका फल यह हुआ कि खरीफ की फसल के खाद्यान्न उत्पादन में जो 9 प्रतिशत से अधिक की कमी हुई थी वह रबी खाद्यान्न के उत्पादन में दो प्रतिशत की वृद्धि होने से कुछ सीमा तक संतुलित हो गयी। अब प्रभावपूर्ण ढंग से सिंचाई की अविलंब व्यवस्था, ऋण सहित अन्य कृषि निवेशों की समय पर पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने जैसे उपायों वाला एक विशेष खाद्यान्न कार्यक्रम तैयार किया गया है ताकि सातवीं योजना के अंत तक (89-90 इसका अंतिम वर्ष है) 1750 लाख मीट्रिक टन खाद्यान्न उत्पादन के मूल निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। इस कार्यक्रम को 14 राज्यों के 169 जिलों में चलाया जा रहा है और वहां पांच मुख्य फसलों – धान, गेहूं, मक्का, अरहर व चने की फसल को समृद्ध बनाने पर बल दिया जा रहा है। खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए अन्य तिलहन विकास कार्यक्रमों के साथ-साथ तिलहनों का प्रौद्योगिकी मिशन भी कार्यरत है। तिलहन उत्पादन वृद्धि की नीतियों के कारण एक ही वर्ष में तिलहन का आयात पचास प्रतिशत से भी कम किया जा सका है। इस वर्ष तिलहन उत्पादन 150 लाख टन होने की संभावना है।

औद्योगिक उत्पादन

समीक्षा में औद्योगिक विकास में वृद्धि को संतोषजनक बताया गया है और कहा गया है कि पिछले पांच वर्षों में औद्योगिक विकास लगातार नौ प्रतिशत की दर से हो रहा है। सूखे के बावजूद 1987-88 में औद्योगिक उत्पादन में लगभग 7.5 प्रतिशत वृद्धि हुई। आधारभूत सुधारों के कारण अब औद्योगिक तंत्र में ऐसे दूरगामी परिवर्तन किये गये हैं जिनके

फलस्वरूप औद्योगिक क्षेत्र अब कृषि उत्पादन में होने वाली घट-बढ़ से अपेक्षाकृत कम प्रभावित होता है। उत्पादन में यह वृद्धि पनबिजली उत्पादन की कमी की पूर्ति के लिये तापीय बिजली उत्पादन बढ़ाकर कायम रखी गयी। नवंबर, 1988 तक के आंकड़ों के अनुसार औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि पिछले वर्ष के मुकाबले 9.3 प्रतिशत अधिक रही। विनिर्माण क्षेत्र में जिसमें कि औद्योगिक उत्पादन का लगभग 4/5 उत्पादन होता है, पहले से भी अधिक अर्थात 10 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई। लेकिन औद्योगिक क्षेत्र में इस सुखद स्थिति के बावजूद कुछ चिंताजनक प्रवृतियां मौजूद हैं। इनमें से एक तो यह है कि औद्योगिक रुग्णता का प्रकोप बढ़ रहा है। इससे उद्योग क्षेत्र की उच्च विकास दर में अवरोध आ सकता है। इस संबंध में तत्काल ठोस उपाय करना नितांत आवश्यक है। सबसे आवश्यक यह है कि रुग्ण व रुग्णता की संभावना वाली इकाइयों की समय पर पहचान करने के तंत्र को पूरी गंभीरता से कार्यान्वित किया जाये ताकि इनमें और पैसा न फंसे व इन्हें जल्दी दुरूस्त किया जा सके। इस संबंध में 1987 में औद्योगिक व वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड की स्थापना की गई थी।

दूसरी चिंताजनक स्थिति संगठित औद्योगिक क्षेत्र में वृद्धि दर बने रहने के बावजूद रोजगार के अवसरों की धीमी वृद्धि है। वस्तुतः इस क्षेत्र में रोजगार की वृद्धि में स्थिरता आ गयी है। इससे स्पष्ट होता है कि नीतियों में इस प्रकार से सुधार करना होगा कि निर्माण उत्पादन क्रियाकलापों में अधिकाधिक जनशक्ति को खपाया जा सके। इसके लिये औद्योगिक रुग्णता भी जिम्मेवार है। इसलिये ऐसे उपाय निकालने होंगे कि अनुत्पादक औद्योगिक इकाइयों से श्रम व पूंजी को तुरंत हटाकर उन्हें अधिक कुशल व लाभप्रद क्रियाकलापों में लगाने के कार्यक्रम लागू किये जायें।

उद्योग क्षेत्र के विकास में तेजी के लिये बिजली की कमी एक बड़ी बाधा है क्योंकि इसकी मांग व पूर्ति में अभी काफी अंतर है। इसलिए जहां विद्युत क्षेत्र में सुधार के उपाय आवश्यक हैं वहीं गैस पर आधारित बिजली घरों में पूंजी लगाना भी श्रेयस्कर रहेगा वरना आठवीं योजना में बिजली की कमी की भारी समस्या हो सकती है। यदि आगे के वर्षों में आयातित तेल की कीमतें बढ़ती रहीं तो पेट्रोलियम पदार्थों की बढ़ती मांग से अर्थव्यवस्था में विदेशी भुगतान की स्थिति बहुत विकट हो जायेगी। इसलिये हमें ऊर्जा संरक्षण के लिये कीमतों तथा कीमतों से भिन्न – दोनों तरह के उपाय करने होंगे व पेट्रोलियम से भिन्न ऊर्जा स्रोतों के उत्पादन व उपयोग को बढ़ावा देने के लिये कदम उठाने होंगे।

सरकारी क्षेत्र के उद्यमों की तरफ भी हमें ध्यान देना होगा तथा इनके कामकाज में सुधार लाकर इन्हें अधिक अधिशेष प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित करना होगा। केंद्रीय उद्यमों में राष्ट्र ने 60,000 करोड़ रुपये से अधिक पूंजीनिवेश किया है इसलिये इस विशाल पूंजी से पर्याप्त लाभ प्राप्त करने की ठोस व प्रभावी नीतियां होना अनिवार्य है। आदर्श यह रहे कि इनके वित्तीय अधिशेषों में जो वृद्धि हो वह लागत में कमी तथा उत्पादकता में वृद्धि से प्राप्त हो।

मूल्य व मूल्य प्रबंध

दो वर्षों के सूखे के बावजूद कृषि के उद्योग क्षेत्र में अच्छे कामकाज के परिणामस्वरूप मुद्रास्फीति की दर नियंत्रण में रही तथा क्रयशक्ति का ह्रास नहीं हुआ। फलस्वरूप सकल राष्ट्रीय उत्पाद में 3.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वस्तुओं व सेवाओं की पूर्ति में उल्लेखनीय विस्तार का थोक सूचकांक पर सशक्त प्रभाव पड़ा है। आशा है कि चालू वर्ष के दौरान कुल मिलाकर आर्थिक विकास दर 9 प्रतिशत रहेगी। सूखे के कारण 1987-88 में थोक मूल्य वृद्धि की वार्षिक दर 10.6 प्रतिशत हो गयी थी लेकिन मौसम अनुकूल होने व अर्थव्यवस्था में मांग तथा पूर्ति का सुव्यवस्थित प्रबंध करने की नीतियों से अब यह लगभग 5 प्रतिशत रह गयी है। इसके अलावा सरकार ने मूल्य नीति के अंतर्गत मूल्य ऐसे स्तर पर बनाये रखने के प्रयास किये हैं जिनसे उत्पादकों को लागत पूरी करने के बाद मुनाफा भी मिले। कृषि पदार्थों के वांछित खरीद-समर्थन मूल्य निर्धारित करने के साथ-साथ कोयले, इस्पात व अलुमीनियम के प्रशासित मूल्यों में भी संशोधन किये जाते रहे ताकि औद्योगिक उत्पादों के मूल्य नियंत्रण में रहें।

चिंताजनक पहलू

लेकिन समीक्षा में भुगतान असंतुलन की स्थिति पर चिंता प्रकट की गयी है और कहा गया है कि इसमें सुधार लाना होगा। सार्वजनिक वित्त पर लगातार दबाव भी आर्थिक प्रबन्ध के लिये एक बड़ी चुनौती बनता जा रहा है

राजकोषीय प्रबंध के पीछे उद्देश्य यह रहा है कि सूखे के बाद के वर्षों में विकास की गति फिर कायम हो तथा निर्यात के लिये निर्धारित प्राथमिकताओं को सुदृढ़ बनाया जाये। पिछले वर्ष सरकार ने बीस लाख टन से अधिक खाद्यान्न का आयात सुरक्षित भंडार हेतु किया। खाने के तेल व दालों का भी आयात करना पड़ा। विकास के लिये आवश्यक औद्योगिक सामान का आयात भी उदारता से किया गया। फलतः विदेशी मुद्रा का भंडार प्रभावित हुआ तथा भुगतान संतुलन की स्थिति बिगड़ गयी।

भुगतान संतुलन पर प्रतिकूल दबावों के कुछ प्रमुख कारण हैं। देश में तेल उत्पादन में कमी, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में संरक्षण की प्रवृत्तियों, विदेशों में नौकरी करने गये भारतीयों द्वारा भेजी जाने वाली विदेशी मुद्रा में कमी, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा अन्य साधनों से प्राप्त ऋणों की देनदारी तथा रियायती दर विदेशी सहायता के लिये वातावरण अनुकूल न होने से भुगतान संतुलन की स्थिति जटिल हुई है। इस समस्या से निपटने के लिये निर्यात बढ़ाना होगा। इस संबंध में कई उपाय किये जा रहे हैं। खास-खास उद्योगों को शुल्क राहत दी गयी है, निवेश भत्ता फिर शुरू किया गया, और कच्चा सामान अंतर्राष्ट्रीय मूल्य पर उपलब्ध कराया गया। पिछले वित्त वर्ष की तुलना में अप्रैल-दिसंबर 1988 के दौरान निर्यात में वृद्धि अवश्य हुई है परन्तु आयात इससे काफी अधिक हुआ है जिसके फलस्वरूप विदेश व्यापार में घाटा बढ़ गया है। इसके लिये निर्यात के क्षेत्र में अधिक ठोस उपाय करने होंगे व आयात की उदार नीति में सामंजस्य लाना होगा। जिन भारी उद्योगों को प्रोत्साहन दिये जा रहे हैं उन पर निर्यात में वृद्धि के लिये भी जोर दिया जाये। समीक्षा में भुगतान असंतुलन व बजटीय असंतुलन दूर करने की तरफ विशेष ध्यान दिलाया गया है व सावधान किया गया है कि राजकोषीय स्थिति में असंतुलन से विकास, मूल्य स्थिरता व विदेशी मुद्रा भंडार पर प्रभाव पड़ता है। समीक्षा के अनुसार पिछले दो वर्षों के दौरान बचत की दर लगभग 20 प्रतिशत के आसपास ही ठहरी रही है। इन्हें प्रोत्साहन देना होगा। केंद्र व राज्यों के बजट घाटे में भी कमी लानी होगी। दूसरी तरफ सरकारी राजस्व तथा व्यय में भी पहले से अधिक संतुलन लाना पड़ेगा। इससे बचत वातावरण में सुधार आयोग एवं मूल्य-स्थिरता की संभावनायें भी प्रबल होंगी।

समीक्षा में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि समाज के कमजोर वर्गों को खाद्यान्न उपलब्धता व वित्तीय साधनों की कठिनाई के कारण उन्हें रियायती दरों पर खाद्यान्न सप्लाई व्यवस्था को मजबूत बनाना होगा। उपभोक्ता संरक्षण की दृष्टि से खुले बाजार में खाद्यान्न तथा खाद्य तेलों की कीमतों पर नियंत्रण रखना होगा। समीक्षा में अंत में इस बात पर बल दिया गया है कि गरीब वर्ग के पास श्रम अत्यधिक महत्वपूर्ण साधन है। इसलिये गरीबी दूर करने की प्रभावपूर्ण नीति के रूप में अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्रों में उत्पादनकारी रोजगार के अवसरों में तेजी से वृद्धि करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

204-एफ,
एम.आई.जी., डी.डी.ए. फ्लैट, राजौरी गार्डन,
नई दिल्ली-110018

बैसाखी

यदुनन्दन प्रसाद शर्मा "यदुवर"

दुनियां में सब लोग मनाते, मेले और तमाशे।
भारत घर त्योहारों का है, इसकी शान सदा से।।
मिल-मिल गले बधाई देते, खुशियां सभी मनाते।
हलवा और सेवियां बंटते, बंटते खील बताशे।।
इन त्योहारों में बैसाखी, झलकाए पंजाब।
झूम-झूम कर नाचें गाएं, भंगड़ा कहां जवाब।।
सूरज मेषे, पर्व सनातन, दान, ध्यान करते हैं।
स्नान सरित, सर मंगलकारी, भण्डारे भरते हैं।।
फसल हुई तैयार, कृषक भी, खुशियां खूब मनाते।
जिन्दा दिल जिन्दादिल रहते, यों माहौल बनाते।।
जलियां वाला बाग दिलाता, याद शहीदों का दिन।
बैसाखी उल्लास महोत्सव, "यदुवर" धरती ऊपर।

सी-221, मिण्टो, रोड कॉम्पलैक्स,
(होटल रंजीत के पीछे)
टैगोर रोड, नई दिल्ली-110002

रेलवे बजट और ग्रामीण विकास

डा० राम शरण गौड़

रेलवे हमारे अर्थतंत्र का अभिन्न और रचनात्मक अंग है। रेलवे जहां रोजगार के अवसर जुटाकर और बड़े पैमाने पर माल की ढुलाई करके आर्थिक विकास में सहायक बनता है, वहीं सुदूर गांवों में बसे भिन्न-भिन्न भाषा, वेश और संस्कृति के लोगों को एक दूसरे से जोड़ने की महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाता है। परिवहन व्यवस्था किसी भी देश की प्रगति का आधार स्तंभ है और हमारे देश की परिवहन व्यवस्था में रेलवे का सर्वोच्च स्थान है। अर्थव्यवस्था में रेलवे की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका के कारण ही हर वर्ष रेल बजट आम बजट से अलग प्रस्तुत किया जाता है।

वर्ष 1989-90 सातवीं योजना का अंतिम वर्ष है। इसलिये इस वित्त वर्ष के लक्ष्यों और उन्हें प्राप्त करने के प्रयासों का अगली योजना पर भी प्रभाव पड़ने वाला है। इस वर्ष के दौरान वे काम भी पूरे करने पर ध्यान दिया जाना है जो योजना अवधि में निश्चित समय पर पूर्ण नहीं किये जा सके। 23 फरवरी को रेल राज्यमंत्री श्री माधवराव सिंधिया द्वारा लोकसभा में पेश किये गये 1989-90 के रेल बजट में इन सभी आवश्यकताओं को ध्यान में रखा गया है।

ग्रामीण विकास समूचे राष्ट्रीय विकास से जुड़ा हुआ है। इस अर्थ में देश के आर्थिक विकास में रेलवे का योगदान परोक्ष रूप से ग्रामीण विकास में भी सहायता करता है। किंतु 1989-90 के बजट में कुछ विशेष बातें भी शामिल की गयी हैं, जिनसे पता चलता है कि रेल बजट तैयार करते समय मंत्री महोदय के मन में ग्रामीण लोगों के हितों की खास तौर पर चिंता थी।

माल भाड़ा रेलवे के राजस्व का मुख्य स्रोत है। रेलवे संचालन की लागत बढ़ जाने तथा सामान्य कीमतों में वृद्धि के कारण रेलवे को समय-समय पर मालभाड़े की दरों में संशोधन करना पड़ता है। इस वर्ष के बजट में भी माल ढुलाई की दरों में 11 प्रतिशत वृद्धि का प्रस्ताव किया गया है। किंतु गरीबों, ग्रामीण लोगों और विशेषकर किसानों के हितों को ध्यान में रखते हुए केवल कुछ ऐसी वस्तुओं को इस वृद्धि से छूट दी गयी है जो अधिकांशतः गांवों के लोगों के द्वारा इस्तेमाल की जाती हैं और जिनके उत्पादन, बिक्री आदि गतिविधियों से मुख्य रूप से ग्रामीण लोग और किसान ही जुड़े हुए हैं। श्री माधवराव सिंधिया ने अपने भाषण में कहा "माल यातायात की दरों में 11 प्रतिशत की वृद्धि का प्रस्ताव है। परंतु समाज के कमजोर और ग्रामीण वर्गों को राहत देने के लिये तथा किसानों के विशेष हितों को ध्यान में रखते हुए कुछ खास वस्तुओं नमक, फल, सब्जियों, गुड़, खाद्य तेल, तिलहन, बिनौले, चारा, पशु और देसी खाद को इस वृद्धि से मुक्त रखा जा रहा है।" इस उपाय से निश्चित रूप से गांवों के लोगों को राहत मिलेगी और किसानों की आय बढ़ेगी। उन पर मूल्य वृद्धि का बोझ अपेक्षाकृत कम पड़ेगा।

इस बार यात्री किरायों में कोई वृद्धि नहीं की गयी है। यह शहर और गांव दोनों के लोगों के लिये बहुत बड़ी राहत है। किंतु निर्धन तथा न्यून आय वाले अधिकतर लोग गांवों में रहते हैं, इसलिये इस निर्णय का भी गांवों के लोग स्वागत करेंगे।

रेलवे देश में रोजगार देने वाला सबसे बड़ा प्रतिष्ठान है। बेरोजगारी हमारे ग्रामीण जीवन की गंभीरतम समस्या है। इस वर्ष के बजट में नयी रेल लाइनें बिछाने, छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदलने तथा नये पुल बनाने की जो परियोजनायें शामिल की गयी हैं उनसे गांवों में रोजगार के अवसरों में पर्याप्त वृद्धि होगी। 1989-90 में 6 नये सेक्शन

चालू किये जायेंगे, जिनमें कुल 191 किलोमीटर लंबी लाइन बिछाई जायेगी । नयी पटरियां बिछाने में पूर्वोत्तर क्षेत्र पर विशेष बल दिया जायेगा । वहां चार नये सेक्शन खोले जायेंगे जिनके लिये 165 किलोमीटर लंबी पटरियां बिछाई जायेंगी । इसके अलावा कई लाइनों के निर्माण का काम जारी रखा जायेगा । 1989-90 में 130 किलोमीटर लंबी गुंटूर मनोरला छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदल दिया जायेगा । इसके साथ–साथ अन्य अनेक छोटी लाइनों को बड़ी लाइन में बदलने की परियोजनाओं का काम जारी रहेगा और कुछ नयी परियोजनायें हाथ में ली जायेंगी । 2432 किलोमीटर की नयी लाइन बिछाने की 14 परियोजनाओं और 1726 किलोमीटर छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदलने की 6 परियोजनाओं के लिये सर्वेक्षण कार्य भी इसी वर्ष प्रारंभ होगा। कई स्थानों पर रेल-सड़क पुल बनाने का प्रस्ताव है, जिसके लिये 22.3 करोड़ रुपये रखे गये हैं । इन सब कार्यक्रमों से गांवों के लोगों को रोजगार मिलेगा जिससे उनकी आर्थिक–सामाजिक दशा में सुधार होगा । रेल गाड़ियां गांवों को शहरों से जोड़ती हैं, जिससे वहां नयी जानकारी, नयी तकनीक और नये विचारों का प्रवेश होता है और किसान अपने उत्पाद शहरों में बेचकर अपनी आय बढ़ा सकते हैं । यही कारण है कि जिन गांवों से रेलगाड़ी गुजरने लगती है वे सौभाग्यशाली माने जाते हैं । नयी सवारी गाड़ियां चलाने से गांवों के विकास में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों प्रकार से मदद मिलती है । नये रेल बजट में 15 नयी सवारी गाड़ियां चलाने की घोषणा की गयी है । इन में से दैनिक गाड़ियां 6, साप्ताहिक 2, सप्ताह में दो दिन चलने वाली चार तथा सप्ताह में तीन दिन चलने वाली तीन रेल गाड़िया हैं । 5 रेलगाड़ियों के दिन बढ़ाने का प्रस्ताव है और अन्य पांच की दूरी बढ़ा दी गयी है ।

अच्छा काम करके समाज के उत्थान में अपना योगदान करने वाले खास व्यक्तियों को किराये में रियायतें देकर रेलवे उन्हें प्रोत्साहित करता रहा है । इस वर्ष के बजट में वीर चक्र तथा अशोक चक्र के विजेताओं और मरणोपरांत सम्मान पाने वालों की विधवाओं, राष्ट्रपति का पुलिस पदक और भारतीय पुलिस पदक प्राप्त करने वालों तथा खेल प्रशिक्षण के लिये द्रोणाचार्य पुरस्कार लेने वालों को किराये में 50 प्रतिशत की रियायत देने का प्रावधान है । 65 वर्ष से अधिक आयु के लोगों को 500 किलोमीटर से ज्यादा दूरी की रेल यात्रा पर किराये में 25 प्रतिशत की छूट देने की घोषणा की गयी । इसके अलावा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व के 61 रेलमार्गों पर नेहरू यात्रा टिकट के रूप में रियायती किराये की सुविधा 1989-90 में भी जारी रहेगी ।

सी-6/203
यमुना विहार
दिल्ली

जन-जन के श्रीराम

सच्चिदानंद

तुम राम, नहीं
विश्वास रहे, आराध्य रहे ।
जन-जन के प्राणाधार रहे ।
पुरुषों की मर्यादा के, जीवन की अभिलाषा के
आदर्श बने, आधार बने, जन-जन के प्राणाधार रहे ।
विश्वास रहे, आराध्य रहे ।

दिग्विजयी बनकर सौम्य रहे
अपनों को खोकर मूक रहे
एकाकीपन को भोग रहे
जन-जन के पालनहार रहे
विश्वास रहे, आराध्य रहे ।

बिंधे रहे तुम प्रश्नों में
संस्कार जन्य प्रारब्धों में
पर न्याय तुम्हारा यही रहा
नैतिकता की पतवार बने
विश्वास रहे, आराध्य रहे ।

तुम पुत्र बने, महाराज बने
भ्राता और सखा समान बने
अनुराग स्रोत से सिंचित हो
अद्भुत तुम रहे, अपार बने
जन-जन के प्राणाधार रहे
विश्वास रहे, आराध्य रहे ।

बी–409
लक्ष्मीबाई नगर
नई–दिल्ली

ग्रामीण बेरोजगारी – निदान आवश्यक

डा. अजय जोशी

भारत ग्राम प्रधान देश है। हमारी जनसंख्या का लगभग 76% भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार है। पिछले कुछ वर्षों में पड़े देशव्यापी सूखे ने यह सिद्ध कर दिया है कि कृषि आज भी मानसून का जुआ है। यदि मानसून अच्छा है तो कृषि उत्पादन अच्छा होगा, फलस्वरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था की दशा अच्छी रहेगी। यदि मानसून अच्छा न रहे तो देश के अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि उत्पादन प्रभावित होता है। इसका प्रभाव रोजगार पर पड़ता है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण क्षेत्रों में भयंकर बेरोजगारी की समस्या व्याप्त हो जाती है। वैसे भी देश के अधिकांश भागों में कृषि पूर्णकालीन रोजगार प्रदान करने का साधन नहीं रही है।

ग्रामीण बेरोजगारी आज की ज्वलन्त समस्या है। इसका निदान किया जाना आवश्यक है। ग्रामीण बेरोजगारी के कारण ही ग्रामीण क्षेत्रों से लोगों का शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन होता है। जिससे संतुलन बिगड़ जाता है तथा शहरों में आवास तथा अन्य सुविधाओं की उपलब्धि की समस्या आ जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों की सीमितता है। इन क्षेत्रों में ऐसे उद्योग धंधे अभी भी स्थापित नहीं हो पाये हैं, जिसके माध्यम से ग्रामीण रोजगार के अवसर सृजित किये जा सकें।

यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने तथा ग्रामीण बेरोजगारी कम करने के लिए केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार तथा विभिन्न संगठनों ने अपने-अपने स्तर पर काफी प्रयास किये हैं। ग्रामीण रोजगार हेतु क्रैश (शीघ्रगामी) योजना अप्रैल 1971 में प्रारंभ की गयी थी। इसका स्वरूप केन्द्रीय योजना का था। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी तथा अल्प रोजगार की स्थिति का मुकाबला करने के लिए देश के सभी जिलों में इस योजना को प्रारंभ किया गया था। देश के प्रत्येक जिले में श्रम गहन परियोजना के अन्तर्गत 10 माह के लिए 10,000 व्यक्तियों को रोजगार दिलाने की योजना निर्धारित की गयी।

ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षित बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत भी ग्रामीण बेरोजगारों को उद्योग तथा सेवा लगाने में ऋण में प्राथमिकता की नीति तय की गयी। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के अन्तर्गत भी गाँवों में टिकाऊ परिसम्पतियों की योजना जैसे सड़क, भवन, सिचाई के लिए नहर आदि का निर्माण कराने की योजना बनायी गयी थी। इस योजना के अन्तर्गत वर्ष 1984-85 के लिए 300 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के अन्तर्गत भी ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी थी। इस हेतु छठी पंचवर्षीय योजना में 1620 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया था।

अगस्त 1979 में स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं के लिए प्रशिक्षण योजना (ट्राइसेम) लागू की गयी। इसके अन्तर्गत प्रतिवर्ष 2 लाख ग्रामीण युवाओं को आवश्यक दक्षता व तकनीकी प्रशिक्षण की व्यवस्था का लक्ष्य रखा गया। छठी योजना में ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत 5 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। खादी तथा ग्रामोद्योग क्षेत्र ने भी ग्रामीण रोजगार अवसरों में वृद्धि हेतु कार्य किया है। इस क्षेत्र में खादी तथा ग्रामोद्योग उत्पादों का उत्पादन कर प्रतिवर्ष

लगभग 40 लाख लोगों को पूर्णकालीन तथा अंशकालीन रोजगार प्रदान किया है।

ग्रामीण रोजगार के लिए सरकार तथा विभिन्न संस्थाओं द्वारा बहुत से कार्यक्रम चलाये गये हैं परन्तु इन सभी को आंशिक सफलता ही मिल पायी। ग्रामीण बेरोजगारी को देखते हुए इन कार्यक्रमों का पूरा लाभ ग्रामीण युवा वर्ग को नहीं मिल पाया। गांवों में ही रोजगार के अवसर सृजित करने वाले उद्योग व व्यवसाय आज भी पूरी तरह से विकसित नहीं हो पाये हैं। इसलिये ग्रामीण बेरोजगारी में वृद्धि हुई है। विभिन्न ग्राम विकास योजनाओं द्वारा भी ग्रामीण क्षेत्रों का पूरा विकास नहीं हो पाया है। विभिन्न ऋण तथा अनुदान योजनाओं का लाभ वास्तव में जिन ग्रामीणों को मिलना चाहिये था, उनके स्थान पर प्रभावशाली लोगों ने इन योजनाओं से लाभ उठाया है। इस प्रकार प्राप्त धन का उन्होंने अपने हित में दुरुपयोग किया है। इन योजनाओं द्वारा भी ग्रामीण रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं हो पायी है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास तथा ग्रामीण बेरोजगारी में कमी के लिए इन सुझावों को अपनाया जा सकता है—

ग्रामीण बेरोजगारी कम करने के लिए यह व्यवस्था ऐसी होनी चाहिये कि ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके। इन योजनाओं के अन्तर्गत अधिक से अधिक लोगों को सम्मिलित किया जाये तथा अधिक से अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जायें।

गांवों में लघु तथा कुटीर उद्योगों की स्थापना पर बल देना नितान्त आवश्यक है। गांवों में वहां के ही कच्चे माल तथा अन्य साधनों पर आधारित छोटे-छोटे उद्योग स्थापित करने हेतु ग्रामीण युवाओं को विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से ऋण तथा अनुदान उपलब्ध कराये जाने चाहिये।

ग्रामीण बेरोजगार उद्यमियों में प्रबन्धकीय कौशल तथा क्षमता का विकास करने हेतु ग्रामीण उद्योग के प्रबन्ध एवं संचालन हेतु विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम जिला उद्योग केन्द्रों तथा व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने वाली शैक्षणिक संस्थाओं द्वारा आयोजित किये जाने चाहिये। इनमें ग्रामीण उद्यमियों को प्रबन्ध का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।

ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का निर्माण करने हेतु पंचायती राज संस्थाओं का सक्रिय सहयोग लिया जाना चाहिये।

मध्यम तथा बड़े आकार के ऐसे उद्योग जिनकी स्थापना गांवों में ही हो सकती है, उन्हें क्षेत्रों में लगाने के लिए विभिन्न राज्य सरकारों तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा उद्यमियों को विशेष सुविधाएं जैसे कम ब्याज दर पर ऋण, बिक्री कर में छूट, बिजली, पानी व भूमि की रियायती दर आदि सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिये।

विभिन्न संचार साधनों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में ही दी गयी प्रोत्साहन योजनाओं का प्रभावी प्रचार प्रसार किया जाना चाहिये ताकि अन्य बाहरी उद्यमी भी ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना कर सकें।

कृषितर कार्य तथा डेयरी, मुर्गी पालन, मछली पालन, भेड़ पालन, हथकरघा तथा इसी प्रकार की अन्य क्रियाएं जोकि प्रत्यक्षतः कृषि पर आधारित नहीं हों तथा जिन्हें कृषि के अतिरिक्त समय में किया जा सके, उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

यदि इन सुझावों को दृष्टिगत रखकर ग्रामीण विकास की योजनाएं बनायी जायें तो निश्चित रूप से ग्रामीण बेरोजगरी कम की जा सकती है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन की प्रवृत्ति में भी कमी होगी जिससे शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या के असन्तुलन की स्थिति के कारण आने वाली विभिन्न समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ेगा।

स्नातकोत्तर व्यवसाय प्रशासन विभाग,
श्री जैन (पी.जी.) कॉलेज,
गंगाशहर, बीकानेर (राज.)

समन्वित ग्रामीण विकास योजना के ट्राइसेम और आइ.एस.बी. घटकों के लिये सहायता प्रारूप—कुछ मुद्दे

डा. बी. सुधाकर राव

ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण देने के राष्ट्रीय कार्यक्रम ट्राइसेम ने देश के कुछ भागों में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है, लेकिन कुछ क्षेत्रों में इसका कोई खास असर नहीं हुआ है। ग्रामीण विकास विभाग ने कई राज्यों में जो अध्ययन किये हैं, उनसे कार्यक्रम की कमजोरियों और उसकी खूबियों का पता चलता है। आमतौर पर यह महसूस किया गया है कि इस कार्यक्रम के अंतर्गत जिन कामों का प्रशिक्षण दिया जाता है वे बहुत बुनियादी काम हैं और उनमें उद्यमशीलता का समावेश नहीं है। इसीलिये स्वरोजगार की क्षमता उत्पन्न करना इन कार्यक्रमों के लिए कठिन होता जा रहा है। तमिलनाडु जैसे कुछ राज्यों में, मुख्य जोर संस्थाओं में प्रशिक्षण पर है, जब कि मध्यप्रदेश जैसे राज्यों में कुशल कारीगरों पर निर्भरता बहुत अधिक है। कुछ अध्ययनों से यह पता लगा है कि स्वरोजगार की गुंजाइश वाले कामों का चुनाव करके प्रशिक्षण देने और प्रशिक्षण प्राप्त युवाओं को व्यावहारिक योजनायें तैयार करने में मदद देने के लिये एक ठोस दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिये। यह भी महसूस किया गया कि व्यापार के गुणों को पैदा करने के लिये एक साधारण पाठ्यक्रम अपनाने और प्रशिक्षण पाये युवकों की दक्षता का जायजा लेने के लिये उनकी परीक्षा लेना भी बहुत जरूरी है। यह भी कहा गया है कि प्रशिक्षण कार्यक्रमों की निगरानी सावधानीपूर्वक की जानी चाहिये, जिससे लाभभोगियों में आत्मविश्वास पैदा होगा और बेहतर नतीजे निकलेंगे। कुछ विकास खंडों में यह देखा गया है कि महिला लाभभोगियों को कोई खास वरीयता नहीं दी जा रही है। अधिकारी आवश्यक तकनीकी सहायता नहीं दे पा रहे हैं।

उदाहरण के लिये आंध्र प्रदेश के विकाराबाद खंड में, ट्राइसेम परियोजना के अंतर्गत देखा गया कि उद्योगों के कार्यकारी अधिकारी तीन खंडों में, प्रशिक्षणार्थियों को तकनीकी सहायता दे रहे हैं, लेकिन वास्तव में, वे प्रत्येक खंड पर अलग से उचित ध्यान नहीं दे पा रहे हैं। इसलिये इस सहायता को इस ढंग से नियोजित किया जाना चाहिये कि उसमें — 1. नयी तकनीकी का उपयोग हो, 2. नये उत्पादनों को बढ़ावा मिले, 3. नये संसाधनों और कृषि के फालतू पदार्थों का लगातार इस्तेमाल हो, 4. अन्य कार्यक्रमों, संगठनों और संस्थाओं से उत्पन्न नयी मांग पूरी हो सके, 5. योजनाओं में उचित तालमेल हो 6. और कार्यक्रम में नयी-नयी रुचियां शामिल की जायें। प्रशिक्षण के दौरान सहायता तब तक लगातर दी जानी चाहिये, जब तक योजना का उद्देश्य पूरा न हो जाये। ऐसा न होने पर प्रबंध क्षमता की कमी या कुछ अंतर्निहित कमियों के कारण यह कार्यक्रम व्यर्थ जा सकता है। ट्राइसेम और आइ.एस.बी. के अंतर्गत प्रशिक्षणार्थियों को सिर्फ दक्षता ही नहीं चाहिये, बल्कि योजनाओं के प्रबंध की क्षमता भी जरूरी है। कुछ योजनाओं में आगे चलकर संशोधन की जरूरत होगी। एक ऐसा समन्वित प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार करना होगा, जिसमें बुनियादी दक्षता, व्यापार की क्षमता, प्रबंध क्षमता और उद्यमशीलता के गुणों का समावेश हो।

वित्तीय सहायता के प्रारूपों से पता चलता है कि औसत ऋण और सबसिडी मिल कर भी इतनी राशि नहीं हो पाती कि एक ग्रामीण युवा पूरे वर्ष के लिये वास्तव में अपने रोजगार में लगा रह सके। उदाहरण के लिये बिहार के मधुबनी जिले के माधोपुर खंड में 1982-83 के दौरान प्रत्येक लाभान्वित व्यक्ति को औसत ऋण और सबसिडी की राशि दो हजार रुपये थी, जो बहुत कम है।

प्रश्न यह है कि क्या यह राशि लगातार आय बढ़ाते रहने के लिये काफी है? उड़ीसा के पुरी जिले के गोपखंड में यह देखा गया कि प्रत्येक लाभान्वित का औसत निश्चित पूंजी निवेश करीब 1,880 रुपये था, जिसमें से सबसिडी मात्र 680 रुपये थी। कई बार ऐसा भी होता है कि ऋण की स्वीकृत राशि जिला ग्रामीण विकास एजेंसी की सिफारिशों से

कहीं कम होती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक ही योजना के अंतर्गत अलग-अलग लाभान्वितों को स्वीकृत ऋण की राशि भिन्न-भिन्न होती है। वित्तीय संस्थायें लाभान्वितों की पूर्व सहमति के बिना उनकी योजनायें भी बदल देती हैं। इसके कारण ऋण के इस्तेमाल पर असर पड़ना स्वाभाविक ही है। कुछ स्थानों पर यह भी देखने में आया है कि जिले में योजना में शामिल बैंक अग्रणी बैंक के निर्देशों का पालन नहीं कर रहे। कुछ स्थानों पर बैंक, सबसिडी की राशि मिलने तक सबसिडी सहित ऋण की कुल राशि पर ब्याज लेते प्रतीत होते हैं। कुछ क्षेत्रों में लाभान्वितों और योजनाओं का पता लगाते समय बैंक का पूरा सहयोग नहीं लिया जाता। योजना और लाभान्वितों का पता लगाने से लेकर उद्योग लगाने तक सभी चरणों में बैंकों को शामिल किये जाने से एकजुटता की भावना पैदा होगी और ऋण की अर्जियों की जांच में कम समय लगेगा तथा अधिकारियों, लाभान्वितों और बैंकों के बीच बेहतर तालमेल होगा।

दूसरी ओर यह भी जरूरी है कि लाभान्वितों और योजनाओं का उचित ढंग से पता लगाया जाये और सारे प्रस्ताव समय पर और पूरे वर्ष के दौरान समान रूप से खंड विकास अधिकारी या जिला ग्रामीण विकास अधिकारी के जरिये बैंकों को पहुंचा दिये जायें।

कुछ मामलों में, सबसिडी मिलने और योजना को अंतिम रूप देने के बीच, समय का अंतर बहुत अधिक होता है। कभी-कभी तो जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को सब-सिडी के दावे निपटाने में 6 महीने लग जाते हैं। यह भी देखा गया कि बैंक सबसिडी के दावे पेश करने में बहुत अधिक समय लगाते हैं। इस बारे में बैंक अधिकारियों का कहना है कि वास्तव में करीब-करीब सारी अर्जियां फरवरी और मार्च के महीने में ही मिलती हैं। इसलिये अर्जियों की जांच और उन पर कार्रवाई करना तत्काल संभव नहीं हो पाता। यदि ये अर्जियां पूरे वर्ष भर समान रूप से मिलती रहें, तो स्वीकृति की देरी से बचा जा सकता है। यह पूरी प्रक्रिया एक पहिये की तरह से चलती है, और एक स्थान पर देरी होने से सारी प्रक्रिया लटक जाती है।

प्रक्रिया में इतनी अधिक देरी होती है कि पता लगाना मुश्किल हो जाता है कि किसी एक वर्ष में कितने लाभान्वितों को पहचाना गया और कितनों में सहायता दी गयी। इसका कारण यह भी है कि खंड, जिला और बैंक स्तर पर सूचियों में बड़े पैमाने पर परिवर्तन हो जाता है। चूंकि ये परिवर्तन जिला ग्रामीण विकास एजेंसी द्वारा स्वीकृत मूल सूची में शामिल नहीं किये गये, इसलिये यह पता लगाने का कोई तरीका ही नहीं था कि बैंकों और जिला ग्रामीण विकास एजेंसी ने अन्ततः किसे लाभान्वित चुना और किसे सहायता मिली। यह कठिनाई इसलिये होती है कि खंड, बैंक और जिला ग्रामीण विकास एजेंसी के स्तर पर सूचनाओं का आदान प्रदान और दस्तावेजों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था में बहुत-सी कमियां हैं।

बैंकों द्वारा अर्जियां अस्वीकार किये जाने पर भी ध्यान दिये जाने की जरूरत है ताकि इस अस्वीकृति के कारणों को कम किया जा सके। अर्जियां अस्वीकार किये जाने के मुख्य कारण हैं:—

1. बैंकों को भेजी गयी अधूरी अर्जियां, 2. उन्हें पूरा करने के लिये लाभान्वितों का बैंक अधिकारियों से न मिलना, 3. पिछले ऋणों की अदायगी न होना, 4. सम्बद्ध गतिविधि में अनुभवहीनता या प्रशिक्षण की कमी के कारण योजना को लाभान्वित व्यक्ति के उपयुक्त न पाया जाना और 5. व्यावहारिक योजना उपलब्ध न होना आदि-आदि।

कुछ मामलों में बैंक ऋण, सहायता और कर्जे की अदायगी आदि मामलों में लचीला रवैया नहीं अपनाते। एक बात और भी है कि ग्रामीण उद्योगों के लिये अधिक कार्यशील पूंजी की जरूरत होती है और उसे पूरा नहीं किया जाता। ऋणों की अदायगी के तरीके में भी इस तरह का फेर बदल होना चाहिये, जो लाभान्वितों की परिस्थितियों के अनुकूल हो।

चूंकि यह कार्यक्रम लगातार चल रहा है, इसलिये स्वाभाविक ही है कि किसी क्षेत्र विशेष या लाभान्वित के लिये व्यावहारिक परियोजनाओं को लगातार ढूंढने में कठिनाई होती है। इसलिये अधिकांश स्थानों पर यह देखा जाता है कि एक से कामों के लिये सहायता दी जा रही है। चूंकि ग्रामीण उद्योगीकरण मुख्य रूप से आई.एस.बी. पर निर्भर है, इसलिये हमें ट्राइसेम और आइ.एस.बी. योजनायें इस तरह तैयार करनी होगीं कि उनमें, 1. ग्रामीण आवश्यकताओं और गांव के कल्याण के लिये उपयुक्त नयी टेक्नोलॉजी, 2. बाजार के अनुरूप नये उत्पादन और उनमें मामूली फेरबदल, 3. नये विकसित होते संसाधनों पर आधारित नये उत्पादन, 4. अन्य कार्यक्रमों से उत्पन्न मांग पर आधारित नये उत्पादन, 5 विभिन्न परियोजनाओं में तालमेल के जरिये बन सकने वाले

नये उत्पादन 6. और संगठन और संस्थाओं से उत्पन्न नयी मांग को पूरा करने वाले नये उत्पादन शामिल हो सकें।

यहां गुजरात ग्रामीण उद्योग विपणन निगम की चर्चा की जा सकती है, जिसके केंद्रों में ऊंट गाड़ी, हाथ गाड़ी और हथकरघा वस्त्रों जैसी वस्तुओं का उत्पादन होता है और यह सामान ऐसी योजनायें शुरू करने वाले लाभान्वितों को सप्लाई किया जाता है। अतः ऐसी योजनाओं का पता लगाया जाना चाहिये जो लाभान्वितों की स्थिति क्षेत्रीय और उपक्षेत्रीय अवसरों, और उभरती हुई मांगों के संदर्भ में, व्यावहारिक हों। यह तभी संभव है जब प्रारंभिक और समर्थन सेवायें, वांछित गुणवत्ता, मात्रा और समय के दौरान उपलब्ध करायी जायें और बड़े संगठन तब तक तैयार माल की बिक्री की व्यवस्था करें जब तक कोई भी उद्योग अपने पैरों पर खड़ा होकर सारी व्यवस्था खुद नहीं संभाल लेता।

योजनाओं को लागू करने वाली विभिन्न एजेंसियों जैसे जिला ग्रामीण विकास एजेंसी, अग्रणी बैंक, बैंक, जिला औद्योगिक निगम, और अन्य तकनीकी विभागों के बीच, तालमेल की भी बहुत कमी है। जहां कहीं यह तालमेल सही दिशा में हुआ है वहां बहुत उत्साहजनक नतीजे मिले हैं किंतु हर विभाग और संगठन की भूमिका निश्चित करने वाली व्यवस्था का बहुत अभाव है। इसमें सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि जिला उद्योग विकास योजनाओं और खंड स्तर की योजनाओं के बीच तालमेल नहीं है। लाभान्वितों और योजनाओं का पता लगाने, अर्जियां तैयार करने, और उनकी जांच पड़ताल करने, ऋण और सब सिडी देने, उद्योग लगाने, योजनाओं का प्रबंध करने तथा ऋणों की अदायगी के दौरान हर स्तर पर तालमेल जरूरी है। कुछ मामलों में देखा गया कि जिला स्तर की समन्वय समिति की बैठक, 6 महीने में भी नहीं होती, जबकि इन सारी समस्याओं की जिम्मेदारी उसी पर है।

उचित तालमेल के लिये आंकड़ों का प्रवाह बहुत जरूरी है। मौजूदा स्थिति में, उद्योग शुरू करने में देरी के बारे में सूचना देना बहुत ही मुश्किल है। इसके लिये जो दस्तावेज तैयार किये गये हैं उनमें संशोधन करके प्रशिक्षण पूरा होने और अपना उद्योग शुरू करने के बीच समय अंतराल को निर्दिष्ट किया जाना जरूरी है। सबसिडि जारी किये जाने और उद्योग शुरू होने के बीच का अंतर भी बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसी के आधार पर अधिकारी इसे दूर करने के प्रयास कर सकते हैं। कभी-कभी खंड स्तर पर उपलब्ध तकनीकी विशेषज्ञ की सलाह भी पर्याप्त नहीं होती। उद्योगों के कार्यकारी अधिकारी को लाभान्वितों को उचित सलाह देने में समर्थ होना चाहिये और इसके लिये जरूरी है कि उसका कार्य क्षेत्र सीमित हो। विस्तार कार्यक्रमों को भी चुस्त बनाया जाना चाहिये, ताकि वह लाभान्वित व्यक्ति को अपनी परियोजना के प्रति आश्वस्त बनाने जैसी विस्तार सेवायें उपलब्ध करा सके। योजना की क्षमता का निर्धारण, उसके लिये भावी कार्रवाई, तालमेल और समीक्षा की सहायता, प्रारूप का, अभिन्न अंग बना दिया जाना चाहिये। इसके लिये जरूरी है कि बुनियादी स्तर पर काम कर रहे सभी कर्मचारियों को समय अंतराल पर उचित निर्देश दिये जायें, और इस बात की पक्की व्यवस्था हो कि इन निर्देशों का पालन किया जाये।

किसी भी योजना को सफलतापूर्वक लागू करने के लिये उद्योग की सेवा, व्यापार और बाजार की गुंजाइश का पता लगाना बहुत महत्वपूर्ण है। दुर्भाग्यवश, हालांकि ग्रामीण क्षेत्रों में कई योजनायें और संगठन शुरू किये गये हैं, फिर भी ग्रामीण उद्योगों की कुछ अंतर्निहित कमजोरियां हैं।

तैयार माल की बिक्री के लिये संगठनात्मक ढांचा दस्तकारों की जरूरतों की पूरी तरह अनुकूल नहीं है, जिसका नतीजा यह है कि अधिकांश दस्तकार आज भी व्यापारियों और बिचौलियों के शोषण के शिकार हैं। ग्रामीण विपणन और सेवा केंद्रों को भी अपनी जड़ें जमानी हैं और कुछ मंडी व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने हैं। सरकारी खरीद कार्यक्रम को अभी ग्रामीण दस्तकारों के मामले में अजमाया जाना बाकी है। ग्रामीण क्षेत्रों में अभी नये-नये डिजाइन अपनाने, क्वालिटी में सुधार, क्वालिटी पर नियंत्रण, अच्छी पैकिंग और ब्रांड नामों जैसे तरीकों को शामिल किया जाना अभी बाकी है। ग्रामीण दस्ताकारों को अपना माल बेचने के तरीके और बाजारों की कोई जानकारी नहीं है।

ऐसी स्थिति में लाभान्वितों को किसी संस्थागत ढांचे से जोड़ना और सहायता सेवायें उपलब्ध कराना बहुत आवश्यक है। इन सेवाओं में, बाजार के बारे में जानकारी देना, प्रमुख व्यापारियों से संबंध रखना, शोषण कम करने के लिये व्यापारियों पर नजर रखना, आर्डर लेकर उत्पादन करना, सरकारी संगठनों से बड़े पैमाने पर थोक माल के आर्डर प्राप्त करना शामिल है। इन्हीं सभी प्रयासों से ट्राईसेम और आइ.एस.बी. के लाभान्वितों की वास्तविक मदद संभव है।

अनुवाद : अखिल मित्तल

दायरे

रीना तिवारी

टेलीग्राम हाथ में लेकर देर तक मैं विमूढ़ खड़ा रहा। स्पष्ट कुछ नहीं लिखा था, सिवा इसके कि काका को बहुत चोट लगी है और मुझे जल्द से जल्द गांव में पहुंच जाना चाहिए।

काका के साथ इस तरह की दुर्घटना कभी भी घट सकती थी। इस सम्भावना के कारण ही काका को कई बार मैंने समझाने की कोशिश की थी कि व्यर्थ के इन लड़ाई-झगड़ों में पड़ने से कोई लाभ नहीं। खुद काका ने मुझे बताया था कि किस तरह मेरे दादा को पट्टीदारों ने रात को सोते वक्त ही जला दिया था। मैं जानता हूं, काका एक मिनट के लिए भी इस बात को नहीं भूल पाते हैं। उनके और पट्टीदारों के परिवार के बीच इस द्वेष ने एक अभेद्य दीवार खड़ी कर दी है। उनके सम्बन्ध अब हिंसा-प्रतिहिंसा पर आधारित हैं। छोटी से छोटी बात पर लाठी-भाले निकलते रहते हैं और सिर फूटते रहते हैं। इस वैमनस्य का अंत अवश्य ही किसी खतरनाक मोड़ पर होगा, ऐसा संकेत भी मैं कई बार काका को दे चुका था। पर काका अपनी जिद से हटने को तैयार नहीं थे।

दूसरे दिन गांव पहुंचा तो गांव के सीवान पर ही रघु चाचा मिल गए। दोनों हाथों में गठरी सम्भाले शायद वे बाजार से लौट रहे थे। मेरे नमस्कार का उत्तर देते हुए बोले, "खबर मिल गई थी ?" मैंने सिर हिलाकर हामी भर दी। वह बोले, "तुम्हारे काका को चोट काफी लगी है। पीछे से हीरा ने लाठी मार दी है।"

"हीरा ने ?" मुझे आश्चर्य हुआ। जिसको पाल-पोसकर बड़ा किया था काका ने, जिसके पूरे परिवार को समय-असमय मदद देते रहे हैं काका, उसी हीरा ने काका को मारा ? मैं चुपचाप रघु चाचा को देखता रहा।

वे उसी तरह फिर गम्भीर स्वर में बोले, "हां हीरा ने इस बात की तो कभी कल्पना भी मैंने नहीं की थी। हीरा, काका पर हाथ उठाए, यह सचमुच असहनीय स्थिति थी। इसलिए नहीं कि वह हमारे पास काम करता था। बल्कि इसलिए कि जिस काका को वह हमेशा पिता सरीखा मानता रहा, जिसके सामने कभी आंख उठाकर बात नहीं की, उन्हीं के ऊपर लाठी उठा दी...

घर पहुंचा तो काका मुझे देखते ही फफक पड़े, "अब बचने की मेरी उम्मीद नहीं बेटे। इच्छा भी नहीं रही। तुम आ गये तो थोड़ा संतोष हो गया। इस अपमान के बाद इस गांव में रह पाना बिल्कुल असम्भव है। इस तरह जिन्दा रहने से मर जाना ही अच्छा है।" फिर एकाएक आवेश में आते हुए बोले, "पर मरने से पहले मैं हीरा को भी जिन्दा नहीं रहने दूंगा।"

मैंने उनके पास चारपाई पर बैठते हुए कहा, "काका, शांत हो जाइए। इस हालत में गुस्सा करने से तबीयत और खराब हो जायेगी। हुआ क्या, यह तो बताइये।"

"अरे बताने को रह ही क्या गया है ? हीरा ने मेरी नाक काट दी। उसे मैं कभी माफ नहीं करूंगा।"

काका दर्द से कराह रहे थे पर उनकी आवाज से बदले की जो गंध आ रही थी, उससे मैं भयभीत हो उठा। मैं जानता हूं, काका के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। पूरे गांव में उनका रोबदाब है।

काका मुझे चुप देखकर बोले, "यह जो हमारे खानदान पर कालिख पुत गई है, उसे धोने का काम तुम्हारा भी है। मैं जानता हूं हीरा बहकावे में आ गया है। हरी के कहने पर उसने ऐसा काम किया है।

"पर काका इस झगड़े की जरूरत ही क्या है ? एक दो कट्ठा जमीन के लिए यह खून-खराबा ? आप छोड़ क्यों नहीं

देते वह जमीन जिसके लिए इतने वर्षों से यह मुकदमा चल रहा है, लड़ाई-झगड़े हो रहे हैं ?"

काका का चेहरा तमतमा गया। पर तत्काल ही अपने को सम्भालते हुए बोले, मर्यादा भी कोई चीज होती है। इस परिवार में हमारे बाद सबसे बड़े तुम हो और बड़े के ऊपर हमेशा अधिक जिम्मेदारी होती है। तुम्हें समझ लेना चाहिए कि तुम्हारे परिवार के दुश्मन कौन-कौन हैं? बाप-दादों की दोस्ती और बाप—दादों की दुश्मनी दोनों भुलाई नहीं जाती।

मुझे गांव आये चार-पांच दिन हो गए। मेरी सारी कोशिशों के बावजूद काका के मन में प्रतिशोध की भावना दिनों दिन और जोर पकड़ती गई। उनके सिर पर पट्टी बंधी थी, परन्तु खाट पर पड़े-पड़े ही वे अपने अपमान का बदला चुकाने की योजना बनाते रहते। ऐसे वक्त में उनका चेहरा देखकर मुझे डर लगता। पता नहीं क्या होगा।

शहरों की तरह गांवों की भी अपनी एक राजनीति होती है। लोगों को ऊपर-नीचे उठाने-गिराने के पैंतरे होते हैं। पर यह तो आपस में ही एक दूसरे को खत्म करने की योजना थी। यह स्थिति मेरा मन स्वीकार करने को तैयार नहीं था। मैं चाहता था कि किसी तरह काका आज के बदलते समय को समझें, अपने को बदलें। परन्तु सारी बातों के बावजूद काका में रत्ती भर भी परिवर्तन नहीं आ पाया था।

एक दिन काका को बिना बताए मैं हीरा के घर पहुंच गया। हीरा अपनी माँ के साथ आंगन में बैठा था। भीतर उसकी पत्नी खाना बना रही थी।

हीरा मुझे देखते ही चौंक पड़ा। बोला "नरेन भैया, आप ?"

उसकी मां ने भी मुझे घूरा। फिर एक खाट आंगन में डालकर मुझे बैठने को कहा और खुद एक पीढ़ा लेकर हीरा के पास ही बैठ गयी। भीतर से आती बरतनों की खनखनाहट की आवाज भी थम गयी। शायद उनके मन में किसी तरह का डर था। मुझे देखते ही यह डर और बढ़ गया था। मुझे पता है, काका को मारने के बाद हीरा भी बचा नहीं था। काका के समर्थकों ने उसे घर से निकाल कर बुरी तरह पीटा था। उसी दिन से हीरा घर के बाहर नहीं निकलता था। वह कुछ-कुछ सहम-सा गया था। किन्तु मुझे पास बैठते देखकर आश्वस्त हुआ।

"कब आये, भैया ?"

"दो—तीन दिन हुए।" मैं अपने में उलझा हुआ था। हीरा मुझे कहीं से भी बदला हुआ नजर नहीं आ रहा था। जिस आदर से वह मुझे बराबर पुकारता था, उसी तरह आज भी पुकार रहा था।

"यह सब कैसे हो गया हीरा ?" मैंने शांत भाव से पूछा "क्यों किया ऐसा तूने ?"

हीरा कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, "आप तो जानते ही हैं, भैया, कि काका का उतना ही आदर मैं करता हूं जितना आप। कभी उनके सामने खड़े होने का साहस मुझमें नहीं हुआ पर...

वह रुक गया। जैसे कहने में हिचक रहा हो।

मैंने सहानुभूतिपूर्वक कहा, "घबड़ा मत, हीरा। मैं सही-सही बात जानना चाहता हूं। इस घटना से काका की सारी इज्जत गांववालों की नजर में खत्म हो गई है, यह तुमसे छिपा नहीं है। काका अपना यह अपमान जीते जी, कभी नहीं सहेंगे। पर मैं चाहता हूं कि किसी तरह पीढ़ी-दर पीढ़ी चली आ रही यह आपस की लड़ाई खत्म हो। मैं तेरी बात नहीं कर रहा हूं, तू तो उनका लड़का जैसा ही है, मैं तो हरी चाचा की बात कर रहा हूं। मेरी समझ में नहीं आता कि तू कैसे बीच में पड़ गया ? तूने कैसे, क्यों काका को मारा ?"

"मैं नहीं चाहता था पर हालात ने मुझे विवश कर दिया। हरी बाबू का सैकड़ों रुपयों का मुझ पर कर्ज है। उन्होंने कहा, अगर तू मेरी तरफ से गवाही दे तो मैं सब रुपये माफ कर दूंगा। सच कहता हूं, भैया मैं तब लालच में आ गया था। आप लोगों का कोड़ार वाला खेत जो हरी बाबा जोत रहे हैं, उसी का मुकदमा था। मैंने कोर्ट में सिर्फ इतना ही कहा था कि यह खेत हरी बाबा का है।"

"पर तू तो जानता है, यह हमारा खेत है।"

"हाँ, पर वर्षों से हरी बाबा जोत रहे हैं, इसलिए.....

"खैर, फिर क्या हुआ ?",

"काकाजी को पता चला तो बहुत नाराज हुए। गुस्से में मेरी मां को मारा। सच कहता हूं, भैया, मां का दर्द मुझसे सहा नहीं गया और मैं....

मैंने देखा, हीरा की मां के दाएं हाथ पर प्लास्टर चढ़ा था और आंखों में आंसू थे।

मैं वापस लौट आया। हीरा की बातों में मुझे कहीं झूठ नजर नहीं आया। आदमी मजबूर हो तो कुछ भी कर सकता है। उसने तो सिर्फ झूठी गवाही ही दी थी। लालच में, पर काका? अपने बड़प्पन की झोंक में कितने नीचे गिर गए थे। औरत पर हाथ उठाने की नीचता कर डाली। नहीं, अब काका के विचारों का पोषण नहीं होना चाहिए। अगर वे नहीं बदलते हैं तो मुझे ही कुछ करना होगा।

करीब पन्द्रह-सोलह दिनों के बाद काका की हालत सुधरी। चलने फिरने लगे। पर ज्यादा दूर नहीं जाते थे। इस बीच हीरा एक-दो बार और मिला था मुझ से, उसी सहज भाव से।

एक दिन मैंने हीरा से कहा, "तू काका से क्षमा मांग ले।"

वह झट तैयार हो गया। बोला, "मुझ से अगर गलती हो गई है तो मैं जरूर क्षमा मांग लूंगा भैया, पर काकाजी को तो आप जानते ही हैं ...."

मैं उसकी बात समझ गया। काका कभी अपने दुश्मन को माफ नहीं करते, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं। यह भी जानता हूं कि काका के मन में दूसरे विचार दौड़ रहे हैं। ऐसी हालत में वे कभी भी हीरा को अपने सामने नहीं खड़ा होने देंगे। काका के बाद घर की जिम्मेदारी मेरे पिता के न होने के कारण, मुझ पर आ जाने वाली थी और मैं नहीं चाहता था कि इन जिम्मेदारियों के साथ इन कटुताओं, इन विरोधों, इन झगड़ों व मुकदमों को भी मुझे ढोना पड़े। इसी कारण मैं समझौते के पक्ष में ज्यादा था, जबकि काका अपने अपमान के प्रतिशोध के लिए व्याकुल थे।

पर अचानक एक दिन सब कुछ बदल गया। काका अब पूर्णतया स्वस्थ हो चुके थे। गांव में उनका इधर उधर आना जाना भी शुरू हो गया था। एक माह से मैं इन्हीं झमेलों के कारण कहीं आ-जा नहीं सका था, इसलिए अब काका के अच्छे हो जाने के कारण मैं भी इधर उधर जाने लगा था। उस दिन मैं अपनी बुआ के यहां चला गया था। रात को वहीं रहा। दूसरे दिन गांव लौटा तो द्वार पर काफी भीड़ जमा देखकर आशंका से दिल धक से हो गया। जल्दी-जल्दी द्वार पर पहुंचा।

लोगों की भीड़ के बीच एक कुर्सी पर दरोगा बैठा था और गांव के एक आदमी से कुछ पूछ रहा था। बगल में ही दो पुलिस वाले भी खड़े थे। काका एक तरफ उदास, एकदम सफेद चेहरा लिए बैठे थे। मेरा माथा ठनका।

"क्या हुआ? क्या हुआ काका?"

काका तो कुछ नहीं बोले पर पास में ही बैठा-काका का लड़का वीरेन बोला, "हीरा मर गया, भैया।"

"क्या?" एक बारगी मेरा पूरा शरीर कांप उठा। नहीं, काका यह नहीं कर सकते। काका इतने निर्दयी नहीं हो सकते। उस लड़के को, जिसे उन्होंने अपने लड़के की तरह पाला था, इस तरह खत्म नहीं कर सकते। नहीं, कभी नहीं।

किसी तरह मैं भागता हुआ मकान के भीतर आया। दरवाजे पर ही काकी खड़ी थीं। मैं उनसे अनायास ही लिपट कर फफक पड़ा। बोला, "काकी, यह क्या हो गया? हीरा को ..."

"ना रे ना! तू जो सोच रहा है, वैसा कुछ नहीं हुआ।" काकी मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए बोली, "हीरा तो सचमुच हीरा था। तेरे काका की जान बचाते-बचाते..." काकी खुद ही सुबकने लगीं।

"क्या?" मैं चौंक पड़ा। काकी को कुछ संदेह भरी नजरों से देखते हुए बोला, "तुम सच बोल रही हो, काकी?"

"हां, भला झूठ क्यों बोलूंगी?"

"पर ....मुझे साफ-साफ बताओ काकी, हुआ क्या?"

"कल रात तेरे काका पास के गांव से लौट रहे थे। ताल वाले रास्ते में कुछ लोगों ने उन्हें घेर लिया। पास में वहीं हीरा कीर्तन कर रहा था। उसने देखा तो तेरे काका को बचाने दौड़ आया। तेरे काका तो किसी तरह जान बचाकर भाग आये पर उसे उन लोगों ने नहीं छोड़ा। तेरे काका कई लोगों को लेकर वहां दौड़े गये, पर तब तक वे लोग भाग चुके थे। बेहोश हीरा को तेरे काका डाक्टर के पास ले गये, किन्तु वह...."

मुझे लगा, यह काका की पूर्व योजना थी। मैंने काकी को क्रोध भरी नजरों से देखा और गुस्से में चीख पड़ा, "नहीं यह झूठ है। यह सब काका की साजिश है। काका ने ही हीरा को..."

"क्या कह रहा है बेटा? हीरा मरने से पहले खुद ही कह

शेष पृष्ठ 36 पर

शिक्षित बेरोजगारों के लिए स्वरोजगार योजना का योगदान

संजय कुमार शर्मा

परिश्रम से रोजी कमाना राज्य के प्रत्येक नागरिक का जन्मसिद्ध अधिकार है। लाभप्रद रोजगार उपलब्ध कराए बिना वित्तीय सहायता देने की प्रणाली व्यक्ति तथा सरकार दोनों के सम्मान को गिराती है। सभी व्यक्ति जो शारीरिक एवं मानसिक कार्य करने के योग्य हैं, उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना आर्थिक विकास की मूलभूत योजनाओं में से एक है। वर्तमान में हमारा सबसे बड़ा दुश्मन देश में फैली हुई बेरोजगारी है। उससे भी बढ़कर है शिक्षित युवकों का बेरोजगार होना। शिक्षित बेरोजगारी की समस्या सरकार के द्वारा ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में शैक्षणिक सुविधाओं के विस्तार के साथ-साथ और भी गम्भीर होती जा रही है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली नवयुवकों को रोजगार देने में असमर्थ रही है।

भारत में कई कार्य क्षेत्र ऐसे हैं जहां रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए जा सकते हैं। इसी को मद्देनजर रखते हुए सरकार द्वारा उद्योग, व्यापार और सेवा माध्यमों के जरिये शिक्षित बेरोजगार युवकों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लिए वर्ष 1983 में एक 'स्वरोजगार योजना' शुरू की गई है। यह योजना सातवीं पंचवर्षीय योजना की शेष अवधि के दौरान लागू रहेगी। योजना की मुख्य विशेषतायें निम्न हैं :—

1. यह योजना आई.टी.आई. उत्तीर्ण युवकों सहित उन युवकों के लिए है जो मैट्रिक या उससे अधिक शिक्षित हैं तथा 18 से 35 वर्ष की आयु के हैं।

2. औद्योगिक कार्य के लिए ऋण की सीमा वर्तमान में 25000 से बढ़ाकर 35000 रुपये कर दी गई है तथा व्यापार के मामले में ऋण की सीमा घटाकर 15000 रुपये कर दी गयी है।

3. इस योजना के अन्तर्गत पात्रता सुनिश्चित करने के लिए प्रतिवर्ष प्रति परिवार 10000 रुपये की सीमा मानदण्ड के रूप में रखी गई है।

4. कुल मंजूरियों का 30 प्रतिशत भाग अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित रखा गया है।

5. इस योजना का लक्ष्य उद्योग, सेवा तथा व्यापार के माध्यम के जरिये प्रति वर्ष 2.5 लाख लाभार्थियों को स्वरोजगार प्रदान करना है।

योजना के अन्तर्गत ऋण की राशि की वापसी आसान किश्तों में होगी। ये किश्तें 5 से 18 महीने की स्थगन के बाद शुरू की जायेंगी। इसमें ब्याज की दर पिछड़े क्षेत्रों में 10 प्रतिशत तथा अन्य क्षेत्रों में 12 प्रतिशत रखी गई है। उद्योग के क्षेत्र में प्रशिक्षण चाहने वाले को प्रशिक्षण की सुविधा भी प्रदान की गई है।

इस योजना का मुख्य उद्देश्य शिक्षित बेरोजगार युवकों को पैकेज सहायता द्वारा अपना उद्योग लगाने व सेवा उद्योग या व्यवसाय शुरू करने की दिशा में प्रोत्साहित करना है ताकि वे अपनी रोजी रोटी खुद कमा सकें तथा नौकरी के पीछे न दोड़ें जैसा कि आज के नवयुवक की मनोवृत्ति है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी पाना ही समझ बैठा है। इस वर्ग में महिलाओं और प्रशिक्षित कार्मिकों को रोजगार के अवसर प्रदान करने में उचित प्राथमिकता दी जायेगी।

वर्तमान में यह योजना शिक्षित बेरोजगार युवकों के आर्थिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इस योजना के अन्तर्गत लाखों लोगों को प्रत्यक्ष लाभ हो रहा है तथा अप्रत्यक्ष रूप से भी हजारों लोगों की अपनी रोजी रोटी जुटाने में सहायता मिल रही है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में इस पर 2300 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान है। इसी योजना के अन्तर्गत वर्ष 1986-87 में 2.5 लाख लाभार्थियों के लक्ष्य की तुलना में लाभार्थियों की संख्या 2.19 लाख थी जिन्हें बैंकों द्वारा 455.12 करोड़ रुपये मंजूर किया गया है। इस प्रकार इस वर्ष लक्ष्य की 85 प्रतिशत प्राप्ति हुई है।

इस तरह यह योजना अपने लक्ष्यों के अनुसार ऋण वितरित करने में एक सीमा तक सफल रही है लेकिन इसकी वास्तविक सफलता तब ही होगी जबकि सहायता सही व्यक्ति को मिले। आज हमारे देश में भ्रष्टाचार व लालफीताशाही का इतना जोर है कि प्रत्येक बिन्दु पर पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाया जाता है। हमें इस प्रवृति पर कड़ी निगरानी रखनी होगी।

हमारी नीतियां चाहे कितनी भी लुभावनी क्यों न हों केवल नीतियों के हवाई पुल बांधने से ही लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं होती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि एक व्यवहारिक व योजनाबद्ध नीति बनाने के साथ-साथ उसके सफल संचालन व क्रियान्वयन पर अधिक ध्यान दिया जाए। इस संबंध में स्वरोजगार योजना को प्रभावी बनाने में निम्न प्रयास सहायक सिद्ध हो सकते हैं–

1. रोजगार अधिकारी को चाहिये कि वह इस बात का ध्यान रखें कि सहायता उचित उम्मीदवार को ही मिले, इस संबंध में उसकी पर्याप्त जांच के बाद ही उसे सहायता उपलब्ध करायी जाये।

2. हमारे युवा के अन्दर प्रशिक्षण व स्वरोजगार अभिरुचियों की कमी है। सरकार को चाहिये कि वह युवकों की इस मनोवृत्ति में परिवर्तन लाये। इसके लिए उन्हें पर्याप्त प्रशिक्षण की सुविधायें उपलब्ध करायी जाए ताकि वे अपने ऋण का सही दिशा में उपयोग कर सकें।

3. ऋण देने मात्र से ही रोजगार वृद्धि की कल्पना बेकार है जब तक कि उसका उचित उपयोग न किया जाये। रोजगार अधिकारी को इस बात पर कड़ी निगरानी रखनी चाहिये कि सहायता जिस कार्य के लिये की गयी है उसका उपयोग उसी कार्य में होना चाहिये।

4. हमें अपनी नीतियों, लक्ष्यों व परिणामों के वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए नियमित व समुचित व्यवस्था करनी चाहिये ताकि उसकी प्रगति के बारे में सही-सही जानकारी मिल सके तथा उनमें और अधिक सुधार कर सकें।

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि ये योजना अधिक व्यवहारिक सिद्ध हो सकती है यदि इन्हें सही ढंग से क्रियान्वित किया जाए। इस प्रकार स्वरोजगार योजना देश में बढ़ती हुई शिक्षित बेरोजगारी की समस्या से निबटने में काफी सहायक सिद्ध हो सकती है।

शोध छात्र
लेखा एवं सांख्यिकी विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

पृष्ठ 34 का शेष

गया है कि वह तेरे काका को बचाने गया था। उसने मारने वालों में से एक दो का नाम भी बताया है।

मैं फिर बाहर आ गया।

काका अभी भी उसी तरह चुपचाप बैठे थे और दरोगा लोगों से पूछताछ कर रहा था।

मैं काका के पास ही आकर बैठ गया।

काका मुझे देखते ही अचानक बिलख उठे और रोते-रोते ही बोले, "मुझे माफ करना बेटे, मैं हीरा को नहीं बचा पाया। उसने अपनी जान देकर मेरी जान बचाई और मैं....मैं उसके लिए कुछ न कर सका। दुष्टों ने मेरे बेटे को मार डाला।"

मैं आश्चर्य से काका का चेहरा देख रहा था जहां दुख और पश्चाताप के मिलेजुले रंग फैले हुए थे।

10101–बी–4
वेस्ट गोरख पार्क,
शाहदरा, दिल्ली 110032

गरीबी निवारक रोजगार योजनाएं

सुबह सिंह यादव

भारतीय नियोजन के संबंध में प्रायः कहा जाता है कि गरीबी व रोजगार जैसी समस्याओं का निवारण उपयुक्त रूप से नहीं हुआ है। वस्तुतः यह बहुत संवेदनशील विषय है। जिन उद्रेक भरी आकांशाओं सहित हमारे युवक शिक्षा प्राप्त करते हैं उन आशाओं के अनुरूप उन्हें रोजगार नहीं मिलता। श्रम शक्ति के आधिक्य के कारण 'नो वैकेन्सी' का बोर्ड उन्हें हर जगह निराशा प्रदान करता है। कतिपय ऐसी कुछ उग्र समस्याओं के औचित्य पूर्ण समाधान हेतु भारत सरकार ने विशिष्ट उत्साहपूर्वक रोजगारदायक योजनाएं आरम्भ की हैं। इनमें से प्रमुख योजनाएं इस प्रकार हैं:-

शिक्षित बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार योजना

भारत सरकार ने रिजर्व बैंक की सलाह से सितम्बर 1983 से यह योजना चलाई है। 1983-84 में 2.5 लाख बेरोजगार युवकों को रोजगार देने का लक्ष्य था। 1984-85 तथा 1985-86 में भी 2.5 लाख का लक्ष्य रखा गया था। इसके लिए लाभभोगियों को अधिकतम 25,000/- रुपये तक की आर्थिक सहायता दी। 7 वीं योजना के शेष वर्षों में भी यह योजना चालू रहेगी। सम्पूर्ण देश में इसका वार्षिक भौतिक लक्ष्य 2.5 लाख लाभभोगियों का है। भारत सरकार द्वारा आबंटित राज्यवार भौतिक लक्ष्यों को राज्य सरकार जिलेवार आबंटित करेगी। इस योजना के अन्तर्गत कुल लाभार्थियों का 30 प्रतिशत अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों में होना चाहिए। कुल निर्धारित लक्ष्यों में 50 प्रतिशत लाभभोगी औद्योगिक कार्यों से, 30 प्रतिशत व्यापार से व शेष 20 प्रतिशत सेवा क्षेत्र से होने चाहिए। ये लक्ष्य राज्य स्तर पर लागू हैं। लाभभोगियों को दी गई सहायता की सीमा औद्योगिक क्षेत्र के लिए 35,000/- तथा सेवा क्षेत्र के लिए 25,000/- तथा व्यवस्था इकाइयों के लिये 15,000/- रुपये होगी।

इस योजना के अन्तर्गत हिताधिकारियों का चयन जिला उद्योग केन्द्र के निष्पादन बल द्वारा किया जाता है। इस निष्पादन बल में जिला उद्योग केन्द्र के महाप्रबन्धक, अग्रणी बैंक अधिकारी तथा उद्योग विभाग के व्यक्ति सदस्य होते हैं। यह योजना 10 लाख से अधिक आबादी वाले नगरों को छोड़कर सारे देश में लागू होगी। यह जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से कार्यान्वित की जायेगी जो उद्योगकर्ता का चयन करेंगे। योजना बनायेंगे तथा व्यापारिक बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ऋण के लिए सिफारिश करेंगे। इस योजना के अन्तर्गत लाभ उठाने वाले व्यक्तियों से रियायती दर पर ब्याज लिया जायेगा। जिला उद्योग केन्द्र द्वारा आवेदन पत्र आमंत्रित करने के बाद इन आवेदन पत्रों की उचित छटनी की जाती है तत्पश्चात् व्यापारिक बैंकों को दे दिये जाते हैं।

शहरी गरीबी के लिए स्वरोजगार योजना

1 सितम्बर, 1986 से भारत सरकार ने रिजर्व बैंक के परामर्श से महानगरों, शहरी व अर्द्धशहरी क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों को स्वरोजगार प्रदान करने के लिए यह नया कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य निर्वाह स्तर से नीचे रहने वाले योग्य परिवारों को अनुदान तथा बैंक साख की सहायता से स्वरोजगार अपनाने योग्य बनाना है। इस बैंक ऋण के लिए कोई जमानत नहीं ली जायेगी। ब्याज की राशि चुकाने के लिए सरकार अनुदान देगी। इस योजना के अन्तर्गत रिक्शा चालकों, बुनकरों, लुहारों, दर्जियों, मेहतरों, मोचियों, धोबियों, फेरीवालों, रेड़ीचालकों इत्यादि को बैंक के जरिये ऋण उपलब्ध कराये जायेंगे। इससे वे नया काम धन्धा चालू कर सकेंगे और पुश्तैनी धन्धे को बदल सकेंगे। इस प्रकार इन सबका अन्तिम परिणाम उनकी आर्थिक दशा में सुधार के रूप में सामने आयेगा।

यह योजना उन सभी शहरों और कस्बों में लागू होगी जिनकी जनसंख्या 10 हजार या उससे अधिक है। शुरू में इस योजना को सार्वजनिक बैंक की कतिपय चयनित शाखाओं द्वारा कार्यान्वित किये जाने का प्रावधान है। इस योजना के अन्तर्गत ऋणकर्ता 10 प्रतिशत वार्षिक ब्याज दर पर 5000 रु. तक ऋण ले सकेंगे। केन्द्रीय सरकार द्वारा बैंकों को 25 प्रतिशत की पूंजीगत आर्थिक सहायता प्रदान करेगी। ऋण की वापसी अदायगी 3 महीने की रियायती अवधि के बाद 3 समान किश्तों में की जायेगी। कुल सहायता की राशि बैंक के पास सावधि जमा के रूप में रखी जायेगी। यह रकम ऋणकर्ताओं

द्वारा सहायता की 75 प्रतिशत रकम चुका दिये जाने के बाद ऋण के बदले समायोजित कर दी जायेगी। ऋण की रकम में से निर्मित परिसम्पत्तियों को गिरवी रखा जायेगा। कोई अन्य गारन्टी/ जमानत नहीं ली जायेगी।

योजना के अन्तर्गत ऋण प्राप्त करने की शर्तें

आवेदक को सम्बद्ध नगर अथवा कस्बे का स्थायी निवासी होना चाहिए और आवेदन की तारीख से ठीक पहले कम से कम 3 वर्ष से लगातार वहां पर रहा होना चाहिए। राशनकार्ड में उसका नाम होना चाहिये। प्रस्तावित धन्धा चालू करने में उसकी रुचि और अनुभव होना चाहिए। उसकी पारिवारिक आय 600/- रुपये प्रति माह से अधिक नहीं होनी चाहिए। आवेदक ने किसी अन्य योजना के अन्तर्गत किसी बैंक/ऋणदाता संस्था से पहले ऋण नहीं लिया होना चाहिए और आवेदक ने किसी बैंक/ऋण संस्था से लिए गए ऋण को चुकाने में कोई चूक नहीं होनी चाहिए।

लाभभोगियों का चयन करते समय 300 व्यक्तियों में से 1 व्यक्ति का मानदण्ड अपनाया जाता है। उल्लेखनीय है कि इस योजना के अन्तर्गत लाभ प्राप्त करने के लिए व्यक्ति का शिक्षित होना आवश्यक नहीं है।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम

ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीनों की निर्धनता व बेरोजगारी को दूर करने के लिए 15 अगस्त 1983 को ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम की घोषणा की गई। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम की भांति इसमें भी टिकाऊ परिसम्पत्तियों के निर्माण पर बल दिया जायेगा जैसे सड़कें, भवन, सिचाई के लिए नहर निर्माण आदि। यह केन्द्रीय सरकार का कार्यक्रम है जबकि राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम में केंद्र व राज्य 50:50 हिस्सा बटाते हैं। भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम भूमिहीनों के लिए जबकि राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम एक सामान्य किस्म का कार्यक्रम है। भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के लिए 1983-84 में 100 करोड़ की राशि रखी गई थी जिसे बढ़ाकर 1984-85 में 300 करोड़ रुपये कर दिया गया है। 1985 के दौरान इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 2580.30 लाख श्रम दिवसों के बराबर रोजगार जुटाया गया।

7वीं योजना में इस कार्यक्रम के तहत 5,250 करोड़ रुपये की धनराशि व्यय करने का विचार किया जा रहा है जो छठी योजना से कहीं अधिक है। आशा है इस कार्यक्रम को लागू करने से निर्धनता व बेरोजगारी को कम करने में काफ़ी मदद मिलेगी।

स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवा प्रशिक्षण की राष्ट्रीय योजना

ग्रामीण युवा वर्ग की बेरोजगारी कम करने हेतु अगस्त, 1979 में यह कार्यक्रम लागू किया गया। इसके अन्तर्गत ग्रामीण युवा वर्ग के लिए आवश्यक दक्षता व तकनीक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है ताकि वे बाद में स्वरोजगार में लग सकें। प्रारम्भ में प्रति वर्ष 2 लाख युवाओं को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य रखा गया था। प्रशिक्षण की अवधि में प्रशिक्षणार्थियों को वित्तीय सहायता दी जाती है और बाद में प्रत्येक व्यक्ति को 3 हजार रु. तक की सबसिडि व औजारों के लिए 250 रुपये उपलब्ध कराये जाते हैं। इस कार्यक्रम हेतु छठी योजना में 5 करोड़ की राशि निर्धारित की गई तथा 1985 तक इसमें 5656 कर्मचारियों को सम्मिलित किया जा चुका है।

उपरोक्त निर्धनता निवारक रोजगार योजनाएं 1970 के दशक में तथा उसके उपरान्त आरम्भ किये गये हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इन कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप गरीबी की रेखा से नीचे रहने वालों की स्थिति में कुछ सुधार हो पाया है लेकिन अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ होना बाकी है। कभी-कभी निर्धारित राशि का अधिकांश भाग कई राज्यों में अप्रयुक्त रह जाता है। जहां राशि का पूर्ण उपयोग हुआ है वहां भी शहरों व गांवों में असंतुलन दिखाई देता है। यह भी शिकायत सुनाई देती है कि गरीबी की रेखा से नीचे जीवन निर्वाह करने वाले लोग, जो वस्तुतः उक्त राशि को प्राप्त करने के पात्र हैं, उन्हें इन योजनाओं का समुचित लाभ नहीं मिल पा रहा है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन कार्यक्रमों की निर्दिष्ट कमियों का व्यापक अध्ययन करके दूर किया जाये तथा विभिन्न कार्यक्रमों के मध्य आवश्यक समन्वय स्थापित करके इन्हें सुचारू रूप से संचालित किया जाये।

आयोजना अधिकारी
बैंक ऑफ बड़ौदा
राजस्थान अंचल, जयपुर

कुरुक्षेत्र, अप्रैल 1989

उन्नत बकरी पालन गरीब महिलाओं के लिए उपयोगी

कृष्ण मुरारी सिंह 'किसान'

देहात में भूमिहीन महिलाएं ज्यादातर संख्या में बकरी पालने का धंधा करती हैं। इससे इनकी आर्थिक गतिविधियों की पूर्ति होती है क्योंकि दुधारु पशुओं में बकरी पालना सबसे सस्ता रहता है। बकरी बच्चे भी ज्यादा देती है और उसके रख-रखाव पर खर्चा भी बहुत कम पड़ता है। इसका चमड़ा भी उपयोगी होता है इसका मांस खाने के काम आता है। अगर देशी बकरी पालने वाली महिलाएं थोड़ा-सा परिवर्तन करें तो मुनाफा अधिक होगा। इसके लिए बकरी पालन का सही तरीका अपनाना जरूरी है।

बकरियों की विभिन्न नस्लें

जमुना पारी-यह गंगा, यमुना और चम्बल के किनारे पाई जाती है। इसकी सफेद चमड़ी पर गहरे लाल धब्बे, कान लम्बे और लटके हुए होते हैं। यह नस्ल दूध और मांस के लिए अच्छी है। बारबरी नस्ल की बकरी दिल्ली, गुड़गांव और करनाल क्षेत्रों में पायी जाती है। इसका छोटा कद, छोटे सींग होते हैं। यह दूध के लिए अच्छी है। सूरती नस्ल की बकरी महाराष्ट्र में पायी जाती है। रंग सफेद और पैर छोटे होते हैं। यह दूध के लिए अच्छी है।

बंगाल नस्ल की बकरी पश्चिम बंगाल के गांवों में लोकप्रिय है। इसके पैर छोटे, बदन भरा हुआ और खाल चिकनी होती है। यह दूध के लिए अच्छी है। बेकताल नस्ल पंजाब की है। लम्बे लटके हुए कान और मुड़े हुए सींग होते हैं जो दूध के लिए अच्छी नस्ल है। मारवाड़ी नस्ल राजस्थान की है। मध्यम आकार, मोटे कान, सींग मुड़े हुए पर नोकीले। मांस के लिए अच्छी है। पश्मीना लद्दाख के क्षेत्रों में पायी जाती है। देखने में छोटी, खूबसूरत। इसकी ऊन बड़ी कीमती होती है। मालावारी लम्बे कान, मध्यम सिर की बकरी केरल में पायी जाती है।

बकरी को कैसे चुनें ?

अच्छी व स्वस्थ बकरी का शरीर बड़ा होना चाहिए। बगल, सामने और ऊपर से देखने पर उसका शरीर लम्बा भरा हुआ और नुकीला-सा लगना चाहिए। अगले पैरों के बिल्कुल पीछे से उसका पेट थोड़ा उठा हुआ होना चाहिए और बांक के पास थोड़ा उठा हुआ होना चाहिए। आंतें लचकदार होनी चाहिए। देखने में चुस्त और आंखें चमकदार हों। खाल मुलायम और ढीली होनी चाहिए।

बकरियों की खुराक

गांव में चरागाह की कमी नहीं होती। इसके अलावा सूखा चारा जितना खा सके दें। दुधारु बकरी को हर ढाई लीटर दूध के पीछे आधा किलोग्राम चारा दें।

पौष्टिक दाने में गेहूँ का चोकर-एक भाग, मड्डा दो भाग, अलसी की खली एक भाग। इसे अच्छी तरह कूट लेनी चाहिए और खली का बारीक चूरा कूट लेना चाहिए। इसमें दो प्रतिशत नमक और दो प्रतिशत हड्डी का चूरा भी मिला देना चाहिए।

दुधारु बकरियों को उनकी खुराक में कुछ खनिज मिश्रण भी देना चाहिए। मिश्रण तैयार करने का तरीका-हड्डी का चूरा 40 भाग, पिसा हुआ चूना या खड़िया 30 भाग, नमक 20 भाग, गंधक 5 भाग, आयरन आक्साईड 2 भाग। यह मिश्रण दो प्रतिशत के हिसाब से मिला कर देना चाहिए। पीने के लिए साफ और ताजा पानी देना चाहिए।

बकरियों के रहने की जगह

गांवों में आम तौर पर बकरियों की रहने के लिए खास जगह की जरूरत नहीं होती फिर भी उन्हें ऐसी जगह रखना चाहिए जहां बदलते मौसम से इनकी रक्षा हो। गांवों में एक खास तरह के विलार होते हैं जो बकरी को खा जाते हैं। अतः इसे खुला न छोड़ें।

जो महिलाएं अधिक बकरी पालने की इच्छुक हैं उन्हें बकरियों को रखने की सस्ती व्यवस्था करनी चाहिये। इनके बाड़े खुले होने चाहिए, जहां काफी जगह हो, धूप और हवा हो तथा गंदगी न हो।

प्रजनन

बकरियां आम तौर पर मई और जून के महीनों में गर्मी पर आती हैं। बकरियों का 15 से 18 महीने की आयु में बोक से मेल कराना चाहिए। बोक में अपनी नस्ल के सभी गुण होने चाहिए और पर्याप्त शक्ति होनी चाहिए। उन्नत नस्ल का बोक प्रजनन के लिए अच्छा होता है। ध्यान देकर खिलाना चाहिए। गर्म जगह पर रखना चाहिए। सर्दियों में उसका खास ध्यान रखना चाहिए। उसके दस्तों पर निगरानी रखनी चाहिए।

बीमारियां

'लंगड़ी या सूजवा' – इससे लंगना में लंगड़ापन आ जाता है। किसी भाग पर सूजन और तेज बुखार की रोकथाम के लिए टीका लगवा लेना चाहिए। मुंह खुर। इसमें तेज बुखार, लंगड़ापन, बार-बार होंठ चाटना और लार टपकना। दूध दोहते समय सफाई कीट नाशक दवा से कुल्ला करायें।

'माता' – इसमें तेज बुखार, खूनी दस्त, दस्त ज्यादा होना। बकरियों को टीका लगवा दें। रोगी पशुओं को अलग कर दें। बकरियों को 'ऐथ्रक्स' नामक बीमारी भी हो जाती है। इसमें भूख नहीं लगती। पशु जुगाली करना छोड़ देते हैं। तेज बुखार कम्पन, उत्तेजना, पसली का दर्द, मुंह, नाक, कान आदि से खून आना। अपनी सभी बकरियों को ऐथ्रक्स का टीका लगवा दें।

'थनपका' – इसमें बुखार चढ़ना, पशु का सुस्त होना, बकरी बच्चे को दूध पीने नहीं देती। इसमें रोगी पशुओं को अलग कर दें। पशुओं के लिए आराम देह बिछावन का प्रबन्ध करें। मनुष्यों की तरह बकरियों को भी चेचक होती है। इसमें बुखार चढ़ना, शरीर पर दाने उभर आना तथा भूख न लगना इनके प्रमुख लक्षण हैं। कीटनाशक दवा छिड़कें। सफाई पर ध्यान दें।

सरकारी सुविधाएं

सरकार अनुदान के साथ विभिन्न राष्ट्रीयकृत बैंकों के द्वारा गरीबी रेखा से नीचे बसर करने वाले लोगों को बकरी खरीदने के लिए आसान किस्तों पर ऋण देती है। इसके लिए प्रखण्ड विकास पदाधिकारी से मिलना चाहिए। प्रखण्ड पशुपालन अधिकारी बकरियों के चुनाव आदि में मदद करते हैं। बकरियों का बीमा भी होता है। इसे अवश्य करा लेना चाहिए।

बकरी की आदत पेड़ों की कलिया तथा पौधों की हरियाली चरने की है। इस आदत के कारण उसे हरियाली का शत्रु समझा जाता है। अतः बकरी को ठीक से बांधे रखना चाहिए।

अगर उन्नत विधि से बकरी पालन करें तो महिलाएं अपनी आर्थिक स्थिति में परिवर्तन ला सकती हैं। इसीलिए गांधी जी ने बकरी को 'गरीबों की गाय' कहा है।

कृषि पुस्तकालय,
ग्राम – बरमा, पो. – सिरारी
जिला – मुंगेर (बिहार)

हरद्वारी कम्बल योजना
खादी ग्रामोद्योग कमीशन की एक पहल

ओमप्रकाश तोषनीवाल .जे.पी. गर्ग

भारत गांवों का देश है। देश के लगभग 6 लाख गांवों में से 40,000 गांव ऐसे हैं जिनकी आबादी 500 से भी कम है 1981 की जनगणना के अनुसार अभी भी लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में ही निवास करती है। अतः हमारे आर्थिक विकास की मूल समस्या इन गांवों को आर्थिक दृष्टि से खुशहाल बनाने की है ताकि लोगों को गांवों में ही रोजगार उपलब्ध हो सकें। इस संदर्भ में यह बात नहीं भुलायी जानी चाहिए कि अब यह सुनिश्चित है कि अकेले कृषि बेकारी की चुनौतियों का सामना नहीं कर सकती। इसीलिए ग्रामोद्योगों का योजनाबद्ध और नियमित विकास ही वह एक मात्र साधन है जो अतिरिक्त रोजगार के अवसर प्रदान कर सकता है,उत्पादन बढ़ा सकता है और ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक हालत में सुधार कर सकता है। बात एक दूसरी भी है। हमारे गांवों की बनावट और बसावट विकेन्द्रित है। अतः इस देश में विकास की दिशा विकेन्द्रित उद्योगों द्वारा ही सम्भव हो सकती है। सैद्धान्तिक तौर पर यह बात देश में ही नहीं देश के बाहर भी महसूस की गई है कि भारत में गरीबी व शोषण का उन्मूलन स्थायी आधार पर केवल एक विकेन्द्रित तथा अहिंसक सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था के माध्यम से ही सम्भव है।

बात साफ है, अगर देश से बेरोजगारी और गरीबी को समाप्त करना है और देश के लोगों का रहन-सहन ऊंचा उठाना है तो जरूरी है कि ग्रामीण उद्योग धन्धों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए और यह तभी सम्भव हो सकता है जब खादी ग्रामोद्योग कमीशन एवं खादी ग्रामोद्योग बोर्ड जैसी संस्थायें इस ओर और अधिक सक्रिय रूप से काम करें। इस संदर्भ में खादी ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा लावड़, निरपुड़ा, (मेरठ जनपद) और गंगेरू तथा मीरापुर (मुजफ्फरनगर जनपद) केन्द्रों पर कम्बल निर्माताओं को उनके उत्पादन की बिक्री की ओर से उन्हें आश्वस्त करना, आज की अपनी परिस्थितियों में अपना विशेष महत्व रखता है। अभी दस वर्ष पूर्व तक यहां के सभी कारीगर अपना उत्पादन निजी व्यापारियों अथवा उनके एजेन्टों के हाथ बेचते आये हैं। जहां इन कारीगरों का शोषण इन बिचौलियों द्वारा बड़े स्तर पर होता था। वे एक मजदूर की हैसियत से अपने कार्य को करते थे तथा उन्हें अपने उत्पादन का सही मूल्य भी नहीं मिल पाता था। इन समस्याओं से निपटने के लिए कारीगरों ने अपनी समितियां गठित कीं, जिसमें वे अपनी अशिक्षा, गरीबी तथा पदाधिकारियों के भ्रष्टाचार के कारण सफलता नहीं पा सके। इसके बाद कुछ संस्थाओं ने इन कारीगरों से कम्बल खरीद का कार्य सीधे ही करना शुरू किया। इनमें भी कुछ संस्थायें खरीदे माल को अपने यहां उत्पादित माल में मिश्रण करने लगी और कारीगरों को समय पर भुगतान नही देती थीं। परिणामस्वरूप कारीगरों की स्थिति ज्यों कि त्यों बनी रही। साथ ही उनके माल की निकासी में व्यवधान रहने लगा। ऐसी स्थिति में कारीगरों को या तो अपना माल कम कीमत पर बेचने के लिए मजबूर होना पड़ता था अथवा अपने माल के धरोहर पर महाजनों से 24 प्रतिशत से 60 प्रतिशत ब्याज की दर पर पैसा उधार लेना पड़ता था।

उक्त बिगड़ती परिस्थितियों पर कारीगरों का रोजगार समाप्त होते देखकर तथा उन्हें शोषण से बचाने हेतु उनके द्वारा उत्पादित माल की खरीद का कार्य इन गांवों के कारीगरों के निवेदन पर खादी ग्रामोद्योग कमीशन ने वर्ष 1977-78 में अपने हाथ में लिया तथा गांधी आश्रम जैसी संस्थाओं से बिक्री हेतु इन्डेन्ट लेकर उन्हें कम्बल आपूर्ति करने लगी। वर्तमान समय में कमीशन द्वारा कारीगरों का पंजीकरण गांववार, जिनमें कम्बल खरीद होती है, निम्न प्रकार हैं:—

जनपद	गांव का नाम	पंजीकृत संख्या	कुल कारीगर
मेरठ	1. लावड	270	600
	2. निरपुड़ा	280	600
मुजफ्फरनगर	3. मीरापुर	70	300
	4. गंगेरू	180	500
	योग	**800**	**2,000**

सन् 1980-81 की तुलना में सन् 1986-87 में कमीशन द्वारा चारों केंद्रों पर कम्बलों की कुल खरीद संख्या में 270 प्रतिशत तथा उनके मूल्य में 466 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। निश्चय ही इस वृद्धि पर सन्तोष प्रकट किया जा सकता है। इसी का यह परिणाम है कि आज कारीगर पहले की अपेक्षा एक बड़ी सीमा तक अपने को स्वावलम्बी समझने लगा है। वह अब मजदूर की हैसियत से नहीं कारीगर की हैसियत से काम करता है। उसको अपने उत्पादन का दाम भी खुले बाजार में बेचने की तुलना में सही मिलता है। जिस पर भी अभी उसकी स्थिति को पूर्णत: सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता।

एक अनुमान के अनुसार इन कारीगरों की उत्पादन करने की क्षमता प्रतिवर्ष करीब ढाई लाख कम्बलों की है और कमीशन द्वारा अभी उनकी आधी क्षमता से भी कम माल खरीदा जाता है, क्योंकि बिक्री का क्षेत्र अभी उत्तर प्रदेश तक सीमित है तथा ग्रामीण लोग ही इनकी खरीद करते हैं। उपभोक्ता रुचि एवं बाजार को विस्तृत करने की दृष्टि से कुछ नये डिजाइन तथा रंगीन कम्बलों के उत्पादन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ऐसा करके हम इन कम्बलों के लिए शहरी क्षेत्रों तथा अन्य राज्यों में भी नई मांग पैदा कर सकते हैं।

हमारी यह मान्यता है कि विपणन-व्यवस्था अपने आप में कोई अकेली चीज नहीं है। समुन्नत विपणन उन सब प्रशोधनों तथा प्रक्रियाओं से जुड़ा हुआ है जो उस उत्पादन के अभिन्न अंग हैं। अत: यदि हम कारीगरों को उनके उत्पादन का उचित मूल्य दिलाना चाहते हैं, विपणन की सभी चिन्ताओं से उन्हें मुक्त रखना चाहते हैं, तथा उनकी आय में वृद्धि करना चाहते हैं तो हमें निम्नलिखित बातों पर भी ध्यान देना होगा:—

1. कमीशन द्वारा कम्बल खरीद का कार्य पूरे वर्ष नहीं चलता है, जिससे उन्हें मजबूर होकर ऐसे समय में जबकि खरीद का कार्य नहीं चलता, अपने भरण पोषण के लिए पैसे हेतु बिचौलियों का सहारा लेने के लिए विवश होना पड़ता है। साथ ही इन कारीगरों को विशेषकर कच्चा माल खरीदने तथा स्टोर सामग्री हेतु पैसे का अभाव भी रहता है। इन सबके लिए न्यूनतम ब्याज दर पर बैंक द्वारा धन उपलब्ध किए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए। इस दिशा में खादी ग्रामोद्योग कमीशन को पहल करनी चाहिए। वह कारीगरों के लिए बैंक को गारन्टी भी देगा तथा सम्भव हो सके तो कारीगरों के माल का भुगतान करते समय ऋण की किश्त वापसी का समायोजन भी करेगा।
2. इन कारीगरों को अपने उत्पादन के लिए कच्चे माल अर्थात उनकी खरीद एवं प्राप्ति में पर्याप्त कठिनाइयां रहती हैं। कच्चा माल उन्हें अलवर, जयपुर, ब्यावर आदि स्थानों पर जाकर लाना होता है। कुछ कच्चा माल हरियाणा, मध्य प्रदेश, वीरमवाड़ी (मद्रास) से भी मंगाते हैं। कई बार उन्हें कच्चा माल बिचौलियों के माध्यम से भी खरीदना पड़ता है। कारीगरों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति की दिशा में खादी ग्रामोद्योग कमीशन को सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। इसका एक स्वरूप कमीशन द्वारा स्वयं कारीगरों को कच्चा माल देना है। जब तक यह व्यवस्था नहीं हो पाती है, तब तक के लिए कच्चे माल को अन्य राज्यों से मंगाने में कारीगरों को रेल भाड़े में कटौती मिलनी चाहिए।
3. इस समय कारीगरों को अपने उत्पादन के सम्बन्ध में जो स्टोर सामग्री की आवश्यकता पड़ती है, उसमें रंग, मिट्टी का तेल, गन्धक तथा गन्धक का तेजाब प्रमुख हैं। देखने में यह आया है कि ये सभी चीजें उन्हें ऊंची कीमत पर खुले बाजार से लेनी होती हैं। यदि हम वस्तुत: इन कारीगरों को शोषण से मुक्त रखना चाहते हैं एवं इनकी आर्थिक दशा में सुधार लाना चाहते हैं तो खादी ग्रामोद्योग कमीशन को ही ये स्टोर सामग्री उचित मूल्य पर देने की व्यवस्था करनी होगी।
4. आज कम्बल उत्पादन की समूची प्रक्रिया पुराने ढर्रे पर ही है। दुर्भाग्य से इन ग्रामीण परम्परागत उद्योगों में लगने वाली प्रक्रियाओं एवं प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित सूचना कारीगरों को न तो सरलता से सुलभ है और न ही इसके प्रसार के लिए कोई क्रमबद्ध प्रयास ही किए गये हैं। खादी ग्रामोद्योग कमीशन को कुछ तकनीकी सुधार, जिसकी काफी गुंजाइश है, की ओर सोचना होगा और इसके लिए कारीगरों को सुविधायें भी देनी होंगी। इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि सुधार करते समय यह ध्यान रखा जाये कि उद्योग की परम्परागत संस्कृति बनी रहे तथा कारीगरों को पूरा काम मिलता रहे।

यदि ऐसा सब कुछ किया जाता है तो इससे उद्योग में अन्तर स्थायित्व आयेगा। एक प्रकार से उद्योग को कमीशन द्वारा संरक्षण मिलते हुए भी वह अपने पैरों पर खड़ा रह सकेगा। कारीगरों की आय में वृद्धि होगी, उनको अधिक समय तक रोजगार मिल सकेगा तथा उनका जीवन स्तर भी उन्नत होगा।

वरिष्ठ व्याख्याता, वाणिज्य विभाग
एस.एस.वी. कालिज, हापुड़ (मेरठ विश्वविद्यालय)

पशुधन और ग्रामीण रोजगार

रामधन

राजस्थान प्रदेश की अर्थव्यवस्था में पशुधन की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। यहां कृषि के पश्चात् प्रदेश की ग्रामीण जनसंख्या तथा मरुस्थल क्षेत्र में तो जनसाधारण का जीविकोपार्जन का एक मात्र साधन पशुपालन ही है। पशुपालन को कृषि के सहायक क्रियाओं में सम्मिलित किया जाता है। प्रदेश की 79 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है, उनमें से आदिवासी जातियां व मरुस्थल क्षेत्र में रहने वाली जनसंख्या विशेषकर पशुपालन पर व उनके उत्पाद के क्रय विक्रय पर आधारित हैं।

राज्य में वर्ष 1951 में 2 करोड़ 55 लाख पशुधन थां, जो वर्ष 1983 की अन्तिम पशु गणना में बढ़कर करीब 4 करोड़ 96 लाख 50 हजार से अधिक हो गया है। मुर्गियों की संख्या क्रमशः 2 लाख 54 हजार से बढ़कर 22 लाख 19 हजार से अधिक हो गयी हैं। वर्ष 1983 की राज्य की व देश के किस्म अनुसार पशुधन का वर्णन निम्न प्रकार है :

(करोड़ों में)

किस्म	राजस्थान 1983	भारत 1983	प्रतिशत
1. गौवंश	1.35	18.25	7.40
2. भैंसवंश	0.60	6.13	9.79
3. बकरे–बकरियां	1.55	7.16	21.65
4. भेड़वंश	1.34	4.13	32.45
5. उष्टवंश	0.08	1.22	6.56
6. सूकरवंश	0.02	——	——
7. घोड़े	0.03	0.09	3.33
8. अन्य	0.02	——	——
योग :	4.96	36.98	13.41

राज्य में देश के कुल पशुधन का करीब 13 प्रतिशत पशुधन निवास करता है। इस बढ़ते हुये विशाल पशुधन से 36 हजार टन दुग्ध, 1750 लाख अण्डों का उत्पादन तथा 17.50 लाख टन मांस का वार्षिक उत्पादन होता है, इससे लाखों लोगों को रोजगार प्राप्त होता है एवं राज्य की अर्थव्यवस्था में 19 प्रतिशत का योगदान पशु सम्पदा द्वारा अर्जित होता है।

राजस्थान में पाया जाने वाला पशुधन अपने उत्पादन गुणों के कारण स्वतः ही अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुये है। यहां पर गौवंश की 7 प्रमुख नस्लें–राठी, थार पारकर, गिर, हरियाणी, नागौरी, कांकरेज तथा मालवी पायी जाती हैं। इसी प्रकार भैंसों में मुर्रा, भेड़ों में प्रमुख नस्लें–चौकला, मगरा, पूंगल, जैसलमेरी, मारवाड़ी, मालपुरा, सोमड़ी आदि अपनी ऊन की महत्ता के कारण प्रसिद्ध हैं।

बकरियां जहां दुग्ध उत्पादन में सहायक हैं, वहां पर मांस उत्पादन के लिए भी प्रसिद्ध हैं। जखराना, सिरोही, अजमेरी, मारवाड़ी बकरियां प्रदेश की मुख्य नस्ले हैं। यहां पर मालानी घोड़े घुड़सवारी एवं पोलो के लिए प्रसिद्ध हैं।

बीकानेरी ऊंट भार ढोने व यात्रा के लिए व जैसलमेरी ऊंट अपनी मतवाली चाल के लिए युग युगोन्तर से प्रसिद्ध हैं। इन्दिरा गांधी नहर के निर्माण कार्य में ऊंटों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि जिस दिन से घरेलू उपयोगी पशु जन्म लेता है, उस दिन से लेकर उसकी मृत्यु तक मनुष्य अपनी आवश्यकता एवं सुविधानुसार उसकी सेवाओं तथा शरीर का भरपूर उपयोग करता है। अपने दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दूध, घी, मांस, ऊन, चमड़ा, हड्डी आदि अनादिकाल से पशुओं से प्राप्त होते चले आ रहे हैं।

इसके अलावा पशुओं का कृषि में भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। अन्न उत्पादन में, खेत जोतने से लेकर रहट में जुतकर कुओं से पानी निकालने में, खेतों को उपजाऊ बनाने हेतु खाद देकर, कृषि उत्पाद को बाजार तक पहुंचाने का कार्य तथा यातायात के साधन के रूप में पशु अपनी सेवायें समर्पित कर रहे हैं।

आज हम 21वीं सदी के निकट पहुंच रहे हैं, ऐसे समय में कृषि प्रधान देश में कृषि स्रोतों के वैज्ञानिकीकरण के पश्चात भी कृषि उत्थान एवं कृषकों तथा पशुपालकों के लिए पशुजन्य शक्ति का महत्व उतना ही बरकरार रहेगा, जो 18 वीं सदी में था क्योंकि आज भी कृषि का 80 प्रतिशत कार्य पारम्परिक तरीकों से किया जाता है, मशीनी युग के बावजूद भी खेतों की जुताई व बुवाई का कार्य अधिकांशतः बैलों द्वारा किया जाता है। राज्य में कृषि जोतों का आकार छोटा होने के कारण ट्रैक्टर से कार्य लेना मुश्किल होता है। इसलिए पशुधन की महत्ता बनी रहती है।

राज्य में 1955 में हलों की संख्या 20.74 लाख थी, जो वर्ष-1983 में बढ़कर 29.87 लाख हो गयी। इसी तरह बैलगाड़ियों की संख्या 5.90 लाख से बढ़कर 10.50 लाख हो गयी। उपरोक्त आंकड़ों से पशुधन की कृषि में महत्ता स्पष्ट झलकती है। इसके साथ-साथ पशुओं से प्राप्त खाद से भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है जो कृषि उत्पादन बढ़ाने की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। देशी खाद भूमि की प्राकृतिकता बनाये रखती है।

कृषक अपने सहायक व्यवसाय – पशुपालन, दुग्ध-व्यवसाय, चमड़ा तथा ऊन व्यवसाय से प्राप्त आय से अपनी आवश्यकतायें पूर्ण करने के उपरान्त कृषि क्षेत्र में विनियोग करता है जिससे एक ओर वह साहूकार के ऋण के जाल में फंसने से बच जाता है, दूसरी ओर इस धन से वह कृषि कार्यों में उपयोग कर कृषि उत्पादकता में वृद्धि करता है जैसे – बीज, खाद, कीटनाशक दवाइयां, समय पर खरीद पाने में समर्थ होता है।

कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए पशुधन का विकास भी आवश्यक है, चूंकि मनुष्य प्रकृति पर निर्भर है और रहेगा। ऐसी परिस्थिति में जो पशुधन उपलब्ध है, उनके विकास हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में महत्व दिया जाना आवश्यक है ताकि हम दूसरों पर निर्भर न रह सकें व उपलब्ध साधनों का उपयोग करते हुए आत्मनिर्भर रहकर सुखी जीवन यापन कर सकें।

राज्य में पिछले 5-6 वर्ष से लगातार अकाल पड़ रहा है जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से राज्य के पश्चिमी क्षेत्र में पशुधन पर पड़ा है। राज्य का अधिकांश पशुधन अकाल से ग्रसित रहा है। राज्य सरकार के अथक प्रयत्नों व स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा पीड़ित पशुओं को सस्ता चारा उपलब्ध कराया गया है। तथा उनके पीने को पानी का इन्तजाम किया गया है। फिर भी राज्य में हजारों की संख्या में पशु अकाल के कारण मर चुके हैं जिससे कृषि कार्यों हेतु पशुधन शक्ति का ह्रास हुआ है। राज्य सरकार को चाहिए कि प्रसिद्ध नागौरी बैलों को संरक्षण देकर इनकी घटती हुई संख्या पर रोक लग सके एवं किसानों को कृषि कार्य हेतु अच्छी नस्ल के पशु प्राप्त हों।

ई–812, लाल कोठी योजना
प्रताप नर्सरी के पास
जयपुर–15

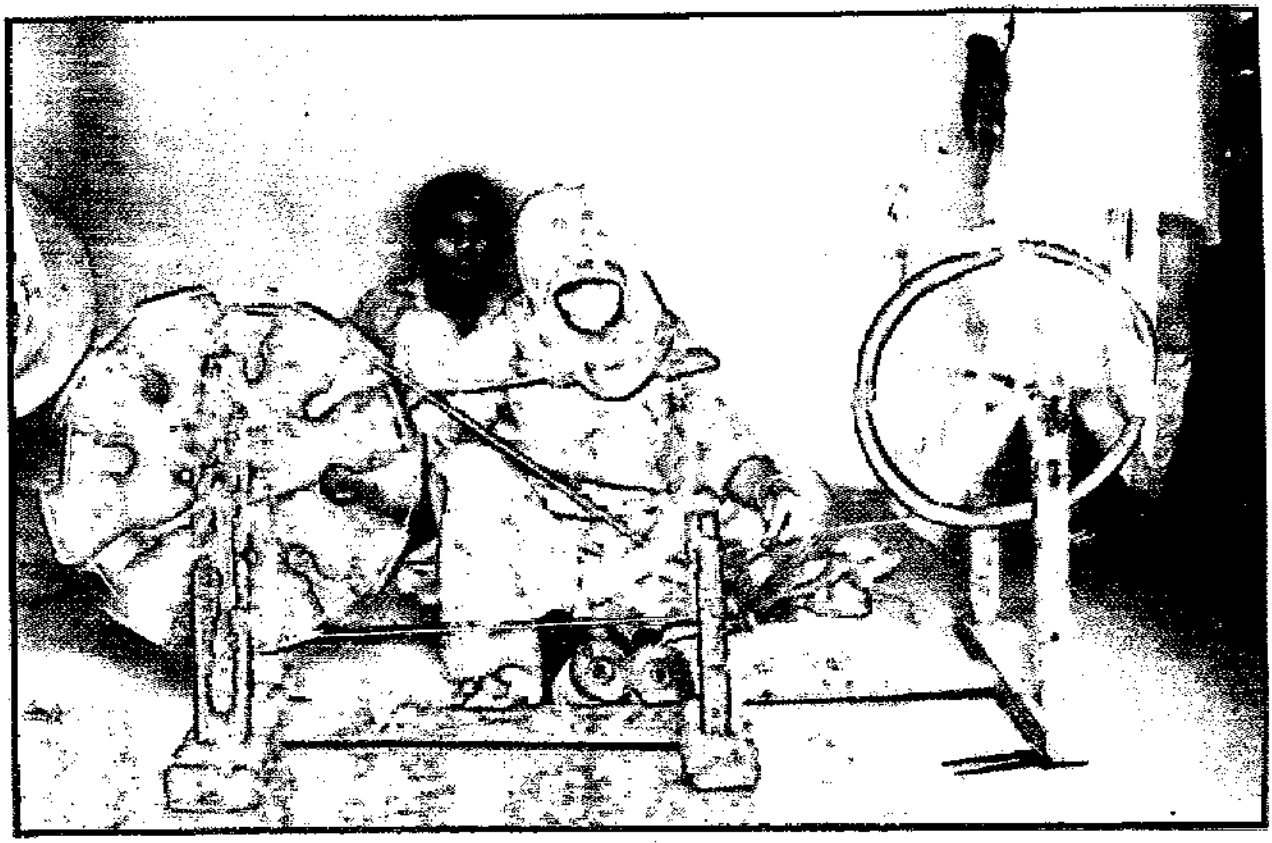

अंशकालिक और पूर्ण बेरोजगारी दूर करने के लिए कुटीर एवं लघु उद्योग प्रभावी उपाय हैं ।

17.4.89

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ., नई दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DN) 98
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और